# कार्ल मार्क्स (1867)

# पूँजी

---

## 'पूंजी' के जर्मन, फ्रांसीसी और अंग्रेजी संस्करणों के लिए कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स द्वारा लिखित भूमिकाएँ और अनुकथन


**पहले जर्मन संस्करण की भूमिका**
**मार्क्स द्वारा एंगेल्स को लिखा गया एक पत्र**
**दूसरे जर्मन संस्करण का अनुकथन**
**फ्रांसीसी संस्करण की भूमिका**
**फ्रांसीसी संस्करण का अनुकथन**
**तीसरे जर्मन संस्करण की भूमिका**
**अंग्रेजी संस्करण की भूमिका**
**चौथे जर्मन संस्करण की भूमिका**


## पहले जर्मन संस्करण की भूमिका

यह रचना, जिसका प्रथम खंड मैं अब जनता के सामने पेश कर रहा हूँ, 1856 में प्रकाशित मेरी पुस्तक Zur Kritik der Politischen Oekonomie की ही अगली कड़ी है. पहले हिस्से और उसकी बाद की कड़ी के बीच समय के इतने बड़े अन्तराल का कारण मेरी कई वर्ष लम्बी बीमारी है, जिसने मेरे काम में बार-बार बाधा डाली.

उस पूर्ववर्ती रचना का सारतत्त्व इस खंड के पहले तीन अध्यायों में संक्षेप में दे दिया गया है. यह केवल सन्दर्भ और पूर्णता की दृष्टि से ही नहीं किया गया है. विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण सुधारा गया है. जहाँ तक परिस्थितियों ने किसी भी तरह इजाजत दी है, पूर्ववर्ती पुस्तक में जिन बहुत सी बातों की ओर इशारा भर किया गया था, इस पुस्तक में उनपर अधिक पूर्णता के साथ विचार किया गया है. इसके विपरीत, वहां जिन बातों पर पूर्णता के साथ विचार किया गया था, इस ग्रन्थ में उनको छुआ भर गया है. मूल्य और द्रव्य के सिद्धांतों के इतिहास से सम्बंधित हिस्से अब अलबत्ता बिलकुल छोड़ दिए गए है. किन्तु जिस पाठक ने पहले पुस्तक को पढ़ा है, वह पायेगा की पहले अध्याय की पाद-टिप्पणियों में इन सिद्धांतों के इतिहास से सम्बन्ध रखनेवाली बहुत सी नयी सामग्री का हवाला दे दिया गया है.

यह नियम सभी विज्ञानों पर लागू होता है की विषय-प्रवेश सदा कठिन होता है. इसलिए पहले अध्याय को और विशेषकर उस अंश को, जिसमें पण्यों का विश्लेषण है, समझने में सबसे अधिक कठिनाई होगी. उस हिस्से को, जो मूल्य के सार तथा मूल्य के परिमाण के विश्लेषण से विशेषकर संबद्ध है, मैंने जहाँ तक संभव हुआ है, सरल बना दिया है.[1]

मूल्य-रूप, जिसकी पूरी तरह विकसित शक्ल द्रव्य-रूप है, बहुत ही सीधी और सरल चीज है. फिर भी मानव-मस्तिष्क को उसकी तह तक पहुँचने का प्रयत्न करते हुए २,००० वर्ष से ज्यादा हो गए है, पर बेसूद, जब कि दूसरी तरफ, उससे कहीं अधिक जटिल और संश्लिष्ट रूपों के सफल विश्लेषण के कम से कम निकट तो पहुंचा जा सका है. इसका क्या कारण है? यही कि एक सजीव इकाई के रूप में शरीर का अध्ययन करना उस शरीर की कोशिकाओं के अध्ययन से ज्यादा आसान होता है. इसके अलावा, आर्थिक रूपों का विश्लेषण करने में न तो सूक्ष्मदर्शक यंत्रों से कोई मदद मिल सकती है, न ही रासायनिक अभिकर्मकों से. दोनों का स्थान अमूर्तीकरण की शक्ति को लेना होगा. लेकिन बुर्जुआ समाज में श्रम के उत्पाद का पण्य-रूप या पण्य का मूल्य-रूप आर्थिक-कोशिका-रूप होता है. सतही नज़र रखनेवाले पाठक को लगेगा कि इन रूपों का विश्लेषण करना फिजूल ही बहुत छोटी-छोटी चीजों में माथा खपाना है. बेशक यह छोटी-छोटी चीजों में माथा खपानेवाली बात है, पर ये वैसी ही छोटी-छोटी चीजें हैं जैसी चीजों से सूक्ष्म शरीररचनाविज्ञान का वास्ता पड़ता है.

अतएव मूल्य-रूप विषयक हिस्से को छोड़कर इस पुस्तक पर कठिन होने का आरोप नहीं लगाया जा सकता. पर जाहिर है, मैं ऐसे पाठक को मानकर चलता हूँ, जो एक नयी चीज सीखने को और इसलिए खुद अपने दिमाग से सोचने को तैयार है.

भौतिकविज्ञानी या तो भौतिक परिघटनाओं का प्रेक्षण वहां करता है, जहाँ वे अपने सबसे विशिष्ट रूप में होती है और विघ्नकारी प्रभावों से अधिकतम मुक्त होती हैं, या जहाँ भी संभव होता है, वह ऐसी परिस्थितियों में खुद प्रयोग करके देखता है, जो परिघटना का अपने सामान्य रूप में होना सुनिश्चित करती है. इस रचना में मुझे पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली और इसके अनुरूप उत्पादन और विनिमय की अवस्थाओं का अध्ययन करना है. अभी तक इनकी आदर्श भूमि इंग्लैंड है. यही कारण है कि अपने सैद्धांतिक विचारों के प्रतिपादन में मैंने इंग्लैंड को मुख्य उदाहरण के रूप में इस्तेमाल किया है. किन्तु यदि जर्मन पाठक इंग्लैंड के औद्योगिक तथा खेतिहर मजदूरों की हालत को देखकर अपने कंधे उचका देता है या बड़े आशावादी ढंग से अपने दिल को यह दिलासा देता है कि खैर, जर्मनी में हालत कम से कम इतनी ख़राब नहीं है, तो मुझे उससे साफ-साफ कहना होगा कि De te fabula narratur! [किस्सा आपका ही है!].

असल में यह पूंजीवादी उत्पादन के नैसर्गिक नियमों के परिणामस्वरूप पैदा होनेवाले सामाजिक विरोधों के विकास की ज्यादा या कम मात्रा का सवाल नहीं है. सवाल खुद इन नियमों का, लौह अनिवार्यता के साथ अवश्यंभावी परिणाम पैदा करने के लिए कार्यरत इन प्रवृतियों का है. औद्योगिक दृष्टि से अधिक विकसित देश कम विकसित देश को सिर्फ उसके अपने भविष्य का बिंब ही दिखलाता है.

लेकिन इसके अलावा एक बात और भी है. जर्मन लोगों के यहाँ पूंजीवादी उत्पादन जहाँ पूरी तरह से स्वाभाविक बन गया है (उदाहरण के लिए, वास्तविक कारखानों में), वहां हालत इंग्लैंड से कहीं ज्यादा खराब हैं, क्योंकि वहां फैक्टरी अधिनियमों के प्रतिभार का अभाव है. बाकि तमाम क्षेत्रों में, यूरोपीय महाद्वीप के पश्चिमी भाग के अन्य सभी देशों की तरह, हमें भी न सिर्फ पूंजीवादी उत्पादन के विकास से ही, बल्कि इस विकास की अपूर्णता से भी कष्ट भोगना पड़ रहा है. आधुनिक बुराइयों के साथ-साथ उत्पादन की कालातीत विधियों के निष्क्रिय रूप से अभी तक बचे रहने से जनित और सामाजिक तथा राजनीतिक असंगतियों के अपने अनिवार्य सिलसिले समेत विरासत में मिली बेशुमार बुराइयाँ हमें कुचल रही हैं. हमें न केवल जीवित, बल्कि मृत चीजें भी सता रही है. Le mort saisit le vif! [मुर्दे जिन्दों को जकडे हुए हैं!]

इंग्लैंड की तुलना में जर्मनी और बाकी महाद्वीपीय पश्चिमी यूरोप में सामाजिक आंकडे बहुत ही खराब ढंग से संकलित किये जाते हैं. लेकिन वे घूंघट को इतना तो ज़रूर उठा देते हैं कि उसके पीछे छिपे हुए मेदूसा के खौफनाक सिर की एक झलक हमें मिल जाये. इंग्लैंड की तरह अगर हमारी सरकारें और संसदें भी समय-समय पर आर्थिक अवस्थाओं की जाँच करने के लिए आयोग नियुक्त करतीं, इन आयोगों के हाथ में भी अगर सत्य का पता लगाने के लिए उतने ही पूर्ण अधिकार होते और इस काम के लिए अगर हमारे देशों में भी इंग्लैंड के फैक्टरी-इंस्पेक्टरों, सार्वजनिक स्वास्थ्य की डाक्टरी रिपोर्टें तैयार करनेवालों और स्त्रियों तथा बच्चों के शोषण और आवास तथा आहार की स्थिति के जाँच आयुक्तों जैसे योग्य और पक्षपातरहित तथा लोगों की लिहाजदारी से आजाद लोगों को पाना संभव होता, तो हम अपने देश में हालत देखकर विस्मयाभिभूत हो जाते. पर्सियस ने एक जादू की टोपी ओढ़ ली थी, ताकि वह जिन दानवों को खोजकर मारने निकला था, वे उसे देख न पायें. हम अपनी आँखों और कानों को जादू की टोपी से इसलिए ढांक लेते हैं कि हम यह मान सकें कि दानव हैं ही नहीं.

इस मामले में अपने को धोखा नहीं देना चाहिए. जिस प्रकार १८वीं सदी में अमेरिका के स्वतन्त्र-युद्ध ने मध्य वर्ग को जागृत करने के लिए घंटा बजाया था, उसी प्रकार १९वीं सदी में अमरीका के गृह-युद्ध ने यूरोप के मजदूर वर्ग के जागरण का घंटा बजाया है. इंग्लैंड में सामाजिक विघटन को बढ़ते हुए कोई भी देख सकता है. जब वह एक खास बिंदु पर पहुच जायेगा, तो उसकी यूरोपीय महाद्वीप पर प्रतिक्रिया होना अनिवार्य है. वहां खुद मजदूर वर्ग के विकास के अनुसार यह विघटन अधिक पाशविक या अधिक मानवीय रूप ग्रहण करेगा. इसलिए अधिक ऊँचे उद्देश्यों की बात रहने भी दी जाये, तो भी जो वर्ग इस समय सत्तारूढ़ है, उनके अपने सबसे महत्वपूर्ण हित मजदूर वर्ग के स्वतन्त्र विकास के रास्ते से कानूनी ढंग से जितनी रुकावटें हटाई जा सकती है, उनके हटाये जाने का तकाजा कर रहे है. इस तथा अन्य कारणों से भी मैंने इस ग्रन्थ में इंग्लैंड के फैक्टरी अधिनियमों के इतिहास, उनके ब्यौरों तथा परिणामों को इतना अधिक स्थान दिया है. हर कौम दूसरी कौम से सीख सकती है और उसे सीखना चाहिए. और जब कोई समाज अपनी गति के स्वाभाविक नियमों का पता लगाने के लिए सही रास्ते पर चल पड़ता है – और इस रचना का अंतिम उद्देश्य आधुनिक समाज की गति के आर्थिक नियम को खोलकर रख देना ही है – तब भी अपने सामान्य विकास के क्रमिक चरणों में सामने आनेवाली रुकावटों को वह न तो हिम्मत के साथ छलांग मारकर पार कर

सकता है और न ही कानून बनाकर उन्हें रास्ते से हटा सकता है. लेकिन वह प्रसव की पीडा को कम कर सकता है और उसकी अवधि को छोटा कर सकता है.

एक संभव गलतफहमी से बचने के लिए दो शब्द कह दिए जाएँ. मैंने पूंजीपति और भूस्वामी को बहुत सुहावने रंगों में कदापि चित्रित नहीं किया है. लेकिन यहाँ व्यक्तियों की चर्चा केवल उसी हद तक की गयी है, जिस हद तक कि वे किन्हीं आर्थिक संवर्गों के साकार रूप या किन्हीं खास वर्गीय संबंधों और वर्गीय हितों के मूर्त रूप बन गए हैं. मेरे दृष्टिकोण के अनुसार समाज की आर्थिक व्यवस्था का विकास प्राकृतिक इतिहास की एक प्रक्रिया है; इसलिए और किसी भी दृष्टिकोण की अपेक्षा मेरा दृष्टिकोण व्यक्ति पर उन संबंधों की कम ज़िम्मेदारी डालेगा, जिनका वह सामाजिक दृष्टि से सदा उपज बना रहता है, चाहे आत्मगत दृष्टि से वह अपने को उनसे कितना भी ऊपर क्यों न उठा ले.

राजनीतिक अर्थशास्त्र के क्षेत्र में स्वतन्त्र वैज्ञानिक अन्वेषण को केवल अन्य सभी क्षेत्रों में सामने आने वाले शत्रुओं का ही सामना नहीं करना पड़ता. यहाँ उसे जिस विशेष प्रकार सामग्री की छानबीन करनी पड़ती है, उसका स्वरूप ही ऐसा है कि वह मानव हृदय के सबसे हिंसक, नीच और घृणित आवेगों – निजी स्वार्थ की राक्षसी प्रवृतियों – को शत्रुओं के रूप में मैदान में ले आता है. उदाहरण के लिए, इंग्लैंड का राज्यानुमोदित चर्च अपने 39 में से ३८ धर्म सिद्धांतों पर किसी भी हमले को चाहे स्वेच्छा से माफ़ कर दे, पर अपनी आमदनी के ३९वें हिस्से पर चोट को हरगिज नहीं सहेगा. आजकल मौजूदा संपत्ति-संबंधों की आलोचना के मुकाबले में तो खुद अनीश्वरवाद भी culpa levis [क्षम्य पाप] है. फिर भी एक असंदिग्ध प्रगति हुई है. मैं मिसाल के लिए पिछले कुछ सप्ताहों में ही प्रकाशित हुई सरकारी रिपोर्ट correspondence with Her Majesty's Mission Abroad, regarding Industrial Question and Trades' Union का उल्लेख कर रहा हूँ. इसमें विदेशों में तैनात ब्रिटिश ताज के प्रतिनिधि साफ़-साफ़ कहते हैं कि जर्मनी में, फ्रांस में – और संक्षेप में कहा जाये, तो यूरोपीय महाद्वीप के सभी देशों में – पूँजी और श्रम के मौजूदा संबंधों में अमूल परिवर्तन बिलकुल इंग्लैंड की ही भांति प्रत्यक्ष और अनिवार्य है. इसके साथ-साथ, अटलान्टिक महासागर के उस पार, संयुक्त राज्य अमरीका के उपराष्ट्रपति मि. वेड ने सार्वजानिक सभाओं में ऐलान किया है कि दास-प्रथा के उन्मूलन के बाद अब अगला काम पूँजी के और भूमि पर निजी स्वामित्व के संबंधों का अमूलत: बदला जाना है. ये समय के संकेत है, जो पादरियों के बैंगनी लबादों या काले चोगों द्वारा नहीं छिपाए जा सकते. उनका यह अर्थ नहीं है कि कल कोई चमत्कार हो जायेगा. वे यह दिखलाते हैं कि खुद शासक वर्गों के भीतर अब यह पूर्वाभास पैदा होने लगा है कि मौजूदा समाज कोई ठोस स्फटिक नहीं है, बल्कि वह एक ऐसा काय है, जो बदल सकता है और बराबर बदलता रहता है.

इस रचना के दूसरे खंड में पूँजी के परिचलन की प्रक्रिया का [2] (दूसरी पुस्तक) और पूंजी द्वारा अपने विकास के दौरान धारण किये जानेवाले विविध रूपों का (तीसरी पुस्तक) विवेचन किया जायेगा और तीसरे तथा अंतिम खंड (चौथी पुस्तक) में सिद्धांत के इतिहास पर प्रकाश डाला जायेगा.

वैज्ञानिक आलोचना पर आधारित प्रत्येक मत का मैं स्वागत करता हूँ. जहाँ तक तथाकथित लोकमत के पूर्वाग्रहों का संबंध है, जिनके लिए मैंने कभी कोई रियायत नहीं की, पहले की तरह आज भी उस महान फ्लोरेंसवासी का यह सिद्धांत ही मेरा भी सिद्धांत है कि Seggui il tuo corso, e lascia dir le gentil [तुम अपनी राह पर चलो, लोग कुछ भी कहें, कहने दो !]

लन्दन, 25 जुलाई 1867 कार्ल मार्क्स

---

1. यह इसलिए और भी आवश्यक था कि शुल्ज़-डेलिच के मत का खंडन करने वाले फ़र्दीनान्द लासाल की रचना के उस हिस्से में भी, जिसमें वह इन विषयों की मेरी व्याख्या का "बौद्धिक सारतत्त्व" देने का दावा करते है, महत्त्वपूर्ण गलतियाँ मौजूद है. यदि लासाल ने अपनी आर्थिक रचनाओं की समस्त मुख्य सैद्धांतिक प्रस्थापनाएँ, जैसे पूंजी के ऐतिहासिक स्वरूप से तथा उत्पादन की अवस्थाओं और उत्पादन की प्रणाली के बीच पाए जानेवाले संबंध से ताल्लुक रखनेवाली प्रस्थापनाएँ, इत्यादि और यहाँ तक कि वह शब्दावली भी, जिसे मैंने रचा है, मेरी रचनाओं से कोई भी आभार प्रदर्शन किये बिना ही अक्षरश: उठा ली है, तो उन्होंने संभवत: प्रचार के प्रयोजनों के कारण ही ऐसा किया है. अलबत्ता इन प्रस्थापनाओं का उन्होंने जिस तरह विस्तारपूर्वक विवेचन किया है और उनको जिस तरह लागू किया है, मैं यहाँ उनका ज़िक्र नहीं कर रहा हूँ . उससे मेरा कोई संबंध नहीं है.

2. पृ. 596 पर लेखक ने बताया है कि इसमें वह किन-किन चीजों को शामिल करता है.

# 16 अगस्त 1867 को मार्क्स द्वारा एंगेल्स को लिखा गया एक पत्र

16 अगस्त 1867, दो बजे रात
प्रिय फ्रेड,

किताब के **आखिरी फर्मे** (49वें फर्मे) को शुद्ध करके मैंने अभी-अभी काम समाप्त किया है. परिशिष्ट – **मूल्य का रूप** – **छोटे टाइप में** सवा फर्मे में आया है.

**भूमिका** को भी शुद्ध करके मैंने कल वापस भेज दिया था. सो **यह खंड समाप्त हो गया है**. उसे समाप्त करना संभव हुआ, इसका श्रेय एकमात्र **तुम्हें** है. तुमने मेरे लिए जो आत्मत्याग किया है, उसके अभाव में मैं तीन खंडों के लिए इतनी जबरदस्त मेहनत संभवतः हरगिज न कर पाता. कृतज्ञता से ओतप्रोत होकर मैं तुम्हारा आलिंगन करता हूँ !

दो फर्मे इस ख़त के साथ रख रहा हूँ, जिसका प्रूफ़ मैं देख चुका हूँ.

15 पाउंड मिल गए थे, धन्यवाद !

नमस्कार, मेरे प्रिय, स्नेही मित्र !
तुम्हारा

**कार्ल मार्क्स**

# दूसरे जर्मन संस्करण का अनुकथन

मुझे शुरूआत प्रथम संस्करण के पाठकों को यह बताने से करनी चाहिए कि दूसरे संस्करण में क्या-क्या परिवर्तन किये गये हैं। पहली नजर में ही यह बात ध्यान आकृष्ट करती है कि पुस्तक की व्यवस्था अब अधिक सुस्पष्ट हो गयी है। जो नयी पाद-टिप्पणियां जोड़ी गयी हैं, उनके आगे हर जगह लिख दिया गया है कि वे दूसरे संस्करण की पाद टिप्पणियां है। मूल पाठ के बारे में निम्नलिखित बातें सबसे महत्वपूर्ण है:

पहले अध्याय के अनुभाग 1 में उन समीकरणों के विश्लेषण से, जिनके द्वारा प्रत्येक विनिमय-मूल्य अभिव्यक्त किया जाता है, मूल्य की व्यूत्पत्ति का विवेचन पहले से अधिक वैज्ञानिक कड़ाई के साथ किया गया है; इसी प्रकार सामाजिक दृष्टि से आवश्यक श्रम-काल द्वारा मूल्य के परिमाण के निर्धारण और मूल्य के सार के आपसी संबंध की तरफ जहां पहले संस्करण में इशारा भर किया गया था, वहां अब उसपर खास जोर दिया गया है। पहले अध्याय के अनुभाग 3 ('मूल्य का रूप') को पूर्णतः संशोधित किया गया है, जो और कुछ नहीं तो इसलिए भी जरूरी हो गया था कि पहले संस्करण में इस विषय का दो जगहों पर विवेचन मेरे मित्र, हैनोवर के डाक्टर एल. कुगेलमान के कारण हुआ था। 1867 के बसंत में मैं उनके यहां ठहरा हुआ था कि हैम्बर्ग से किताब के पहलू प्रूफ आ गये और डा. कुगेलमान ने मुझे इस बात का कायल कर दिया कि अधिकतर पाठकों के लिए मूल्य के रूप की एक और, पहले से ज्यादा शिक्षात्मक व्याख्या की आवश्यकता

है। पहले अध्याय का अंतिम अनुभाग- 'पण्य की जड़ पूजा, इत्यादी'- बहुत कुछ बदल दिया गया है। तीसरे अध्याय के अनुभाग 1 ('मूल्यों की माप') को बहुत ध्यानपूर्वक दुहराया गया है, क्योंकि पहले संस्करण में इस अनुभाग की तरफ लापरवाही बरती गयी थी और पाठक को बर्लिन से 1859 में प्रकाशित Zur Kirtik der Politischen Oekonomie में दी गयी व्यख्या का हवाला भर दे दिया गया था। सातवें अध्याय को, खासकर उसके दूसरे हिस्से (अंग्रेजी संस्करण में नौवें अध्याय के अनुभाग 2) को बहुत हद तक फिर से लिख डाला गया है।

पुस्तक के पाठ में जो बहुत से आंशिक परिवर्तन किये गये हैं, उन सबकी चर्चा करना समय का अपव्यय करना होगा, क्योंकि बहुधा वे विशुद्ध शैलगत परिवर्तन है। ऐसे परिवर्तन पूरी किताब में मिलेंगे। फिर भी अब, पेरिस से निकलनेवाले फ्रांसीसी अनुवाद को दुहराने पर, मुझे लगता है कि जर्मन भाषा के मूल पाठ के कई हिस्से ऐसे हैं, जिनको संभवतया बहुत मुकम्मल ढंग से नये सिरे से ढालने की आवश्यकता है, कई अन्य हिस्सों का बहुत काफी शैलीगत संपदान करने की जरूरत है और कुछ और हिस्सों में कहीं-कहीं जो भूलें हो गयी थीं, उन्हें लगनपूर्वक आवश्यक है। लेकिन इसके लिए समय नहीं था। कारण कि पहले संस्करण के खत्म होने और दूसरे संस्करण की छपाई के जनवरी 1872 में आरंभ होने की सूचना मुझे केवल 1871 के शरद में ही मिली। तब मैं दूसरे जरूरी कामों में फंसा हुआ था।

'पूंजी' को जर्मन मजूदर वर्ग के व्यापक क्षेत्रों में तेजी से आदर प्राप्त हुआ, वहीं मेरी मेहनत का सबसे बड़ा इनाम है। आर्थिक मामलों में पूंजीवादी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करनेवाले वियेना के एक कारखानेदार हर मायर ने फ्रांसीसी जर्मन युद्ध के दौरान प्रकाशित एक पुस्तिका में इस विचार का बहुत ठीक-ठीक प्रतिपादन किया था कि जर्मनी के शिक्षित कहलाने वाले वर्गों में सैद्धान्तिक चिंतन-मनन की महान क्षमता, जो जर्मन लोगों को पुश्तैनी गुण समझी जाती थी, अब लगभग पूर्णतया गायब हो गयी है, किन्तु इसके विपरीत जर्मन मजदूर वर्ग में यह क्षमता अपने पुतरूत्थान का उत्सव मना रहीं है।

जर्मनी में इस समय तक राजनीतिक अर्थशास्त्र एक विदेशी विज्ञान जैसा है। गुस्ताव फोन गूलीह ने अपनी पुस्तक Geschichtliche Darstellung des Handels, der Gewerbe und des Ackerbaus etc. (5 vols, jena, 1930-1845) में और खासकर उसके 1830 में प्रकाशित पहले दो खंडों में उन ऐतिहासिक परिस्थितियों पर विस्तार पूर्वक विचार किया है, जो जर्मनी में उत्पादन की पूंजीवादी विधि के विकास नहीं हो पाया। इस प्रकार, वहां वह मिट्ठी ही नहीं थी, जिसमें राजनीतिक अर्थशास्त्र का पैधा उगता है। इस विज्ञान को तैयार माल के रूप में इंगलैंड और फ्रांस से मंगना पड़ा और इसके जर्मन प्रोफेसर स्कूली लड़के ही बने रहे। उनके हाथों में विदेशी वास्तविकता की सैद्धातिंक अभिव्यक्ति जड़ सूत्रों का संग्रह बन गयी, जिनकी व्याख्या वे अपने इर्दगिर्द की टुटपुंजिया दुनिया के ढंग से करते थे और इसलिए यह गलत व्याख्या होती थी। वैज्ञानिक नपुंसकता की भावना, जो बहुत दबाने पर भी पूरी तरह कभी नहीं दबती, और यह परेशान करनेवाला अहसास कि हम एक ऐसे विषय को हाथ लगा रहे हैं, जो हमारे लिए वास्तव में एक पराया विषय है- इनको या तो साहित्यिक एवं ऐतिहासिक पांडित्य-प्रदर्शन के नीचे छिपा दिया जाता था, या इन पर तथा-कथित कामेराल विज्ञानों, अर्थात् अनके विषयों की उस पंचमेल, सतही और अपूर्ण जानकारी से उधार मांगकर लायी हुई कुछ बाहरी

सामग्री का पर्दा डाल दिया जाता था, जिसकी वैतरणी को जर्मन नौकरशाही का सदस्य बनने की आशा रखनेवाले हर उम्मीदवार को पार करना पड़ता है; लेकिन फिर भी यह भावना और यह अहसास पूरी तरह छिप पाते थे।

1848 से जर्मनी में पूंजीवादी उत्पादन का बहुत तेजी से विकास हुआ है, और इस वक्त तो यह सट्टेबाजी और धोखेधड़ी के रूप में पूरी जवानी पर है। लेकिन हमारे पेशेवर अर्थशास्त्रियों पर भाग्य ने अब भी दया नहीं की है। जिस समय ये लोग राजनीतिक परिस्थितियां वास्तव में मौजूद नहीं थी। और जब ये परिस्थितियां वहंा पैदा हुई, तो हालत ऐसी थी कि पूंजीवादी क्षितिज की सीमाओं के भीतर रहते हुए उकनी वास्तविक एवं निष्पक्ष छानबीन करना असंभव हो गया। जिस हद तक राजनीतिक अर्थशास्त्र इस क्षितिज की सीमाओं के भीतर रहता है, अर्थात् जिस हद तक पूंजीवादी व्यवस्था को सामाजिक उत्पादन के विकास की एक अस्थायी ऐतिहासिक मंजिल नहीं बल्कि उसका एकदम अंतिम रूप समझा जाता है, उस हद तक राजनीतिक अर्थशास्त्र केवल उसी समय तक विज्ञान रह सकता है जब तक कि वर्ग-संघर्ष सुषुप्तावस्था में है या जब तक कि वह केवल इक्की-दुक्की और अलग-थलग परिघटनाओं के रूप में प्रकट होता है।

हम इंगलैंड को लें। उसका राजनीतिक अर्थशास्त्र उस काल का है, जब वर्ग-संघर्ष का विकास नहीं हुआ था। आखिर में जाकर उसके अंतिम महान प्रतिनिधि-रिकार्डो- ने वर्ग-हितों के विरोध को, मजदूरी और मुनाफे के तथा मुनाफे और किराये के विरोध को सचेतन ढंग से अपनी खोज का प्रस्थान बिंदु बनाया और अपने भोलेपन में यह समझा कि यह विरोध प्रकृति का एक सामाजिक नियम है। किन्तु इस प्रकार प्रारंभ करके पूंजीवादी अर्थशास्त्र का विज्ञान उस सीाम पर पहुंच गया था, जिसे लांघना उसकी सामर्थ्य के बाहर था। रिकॉर्डो के जीवन काल में ही और उनके विरोध के तौर पर सिस्मोंदी ने इस दृष्टिकोण की कड़ी आलोचना की।

इसके बाद जो काल आया, अर्थात् 1820 से 1830 तक, वह इंगलैंड में राजनीतिक अर्थशास्त्र के क्षेत्र में वैज्ञानिक छानबीन की दृष्टि से उल्लेखनीय था। किन्तु यह रिकार्डो के सिद्धांत का काल भी था। बड़े शानदार दंगल हुए। उनमें जो कुछ हुआ, उसकी यूरोपीय महाद्वीप में बहुत कम जानकारी है, क्योंकि इस वाद-विवाद का अधिकतर भाग पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होनेवाले लेखों और जब-तब प्रकाशित साहित्य तथा पुस्तिकाओं में बिखरा हुआ है। इस वाद-विवाद के पूर्वाग्रहरहित स्वरूप का कारण हालांकि कुछ खास-खास मौकों पर रिकॉर्डो का सिद्धांत तभी से बुर्जुआ अर्थशास्त्र पर हमला करने के हथियार का काम देने लगा था- उस समय की परिस्थितियां थी। एक ओर तो आधुनिक उद्योग खुद उस सयम अपने बचपन से निकाल ही रहा था, जिसका प्रमाण यह है कि 1825 के संकट के साथ पहली बार उसके आधुनिक जीवन के आवधिक चक्र का श्रीगणेश होता है। दूसरी ओर, पूंजी और श्रम का वर्ग संघर्ष पृष्ठभूमि में धकेल दिया गया था, राजनीतिक दृष्टि से उस झगड़े द्वारा, जो एक तरफ Holy Alliance (पवित्र गुट) के इर्दगिर्द एकत्रित सरकारों तथा सामंती अभिजात वर्ग और दूसरी तरफ, बुर्जुआ वर्ग के नेतृत्व में साधारण जनता के बीच चल रहा था; और उस झगड़े द्वारा, जो औद्योगिक पूंजी तथा अभिजातवर्गीय भूसंपत्ति के बीच चल रहा था। यह दूसरा झगड़ा फ्रांस में छोटी और बड़ी भूसंपत्ति के झगड़े से छिप गया था, और इंगलैंड में वह अनाज-कानूनों के

बाद खुल्लम खुल्ला शुरू हो गया था। इस समय का इंग्लेंड का राजनीतिक अर्थशास्त्र संबंधी साहित्य उस तूफानी प्रगति की याद दिलाता है, जो फ्रांस में डा. केने की मृत्यु के बाद हुई थी, मगर उसी तरह, जैसे अक्तूबर की अल्पकालीन गरमी वसंत की याद दिलाती है। 1830 में निर्णायक सकट आ पहुंचा।

फ्रांस और इंगलेड में बुर्जुआ वर्ग ने राजनीतिक सत्ता पर अधिकार कर लिया था। उस समय से ही वर्ग-संघर्ष व्यवहारिक तथा सैद्धांतिक दोनों दृष्टियों से अधिकाधिक बेलाग और डरावना रूप धारण करता गयां इसने वैज्ञानिक बुर्जुआ अर्थशास्त्र की मौत की घंटी बजा दी। उस वक्त से ही सवाल यह नहीं रह गया कि अमुक प्रमेय सही है या नहीं, बल्कि सवाल यह हो गया कि वह पूंजी के लिए हितकर है या हानिकारक, उपयोगी है या अनुपयोगी, राजनीतिक दृष्टि से खतरनाक है या नहीं। निष्पक्ष छानबीन करनेवालों की जगह किराये के पहलवानों ने ले ली; सच्ची वैज्ञानिक खोज का स्थान दुर्भावना तथा पक्षमंडन के कुत्सित इरादे ने ग्रहण कर लिया। इसके बावजूद उन धृष्टतापूर्ण पुस्तिकाओं का भी यदि वैज्ञानिक नहीं, तो ऐतिहासिक महत्व जरूर है, जिनसे कॉबडन और ब्राइट नामक कारखानेदारों के नेतृत्व में चलनेवाली अनाज-कानून विरोधी लीग ने दुनिया को पाट दिय था। उनका ऐतिहासिक महत्व इसलिए है कि उनमें अभिजातवर्गीय भूस्वामियों की बातों का खंडन किया गया था। लेकिन उसके बाद से स्वतंत्र व्यापार के कानूनों ने, जिनका उद्घाटन सर रॉबर्ट पील ने किया था, सतही राजनीतिक अर्थशास्त्र के इस आखिरी कांटे को भी निकाल दिया है।

1848-1849 में यूरोप के महाद्वीपीय भाग में जो क्रांति हुई, उसकी प्रतिक्रिया इंगलैंड में भी हुई। जो लोग अब भी वैज्ञानिक होने का थोड़ा बहुत दावा करते थे और महज शासक वर्गों के ज़रख़रीद तथा मुसाहिब ही नहीं बने रहना चाहते थे, उन्होंने पूंजी के राजनीतिक अर्थशास्त्र का सर्वहारा के उन दावों के साथ ताल-मेल बैठाने की कोशिश की, जिनकी अब अवेहलना नहीं की जा सकती थी। इससे एक छिछला समन्वयवाद आरंभ हुआ, जिसके सबसे अच्छे प्रतिनिधि जॉन स्टुअर्ट मिल हैं। इस प्रकार बुर्जुआ अर्थशास्त्र ने अपने दिवालियेपन की घोषणा कर दी, जो एक ऐसी घटना थी, जिस पर महान रूसी विद्वान एवं आलोचक नि. चेर्नाीशेव्स्की ने अपनी रचना 'मिल के अनुसार राजनीतिक अर्थशास्त्र की रूपरेखा' में पंाडित्यपूर्ण प्रकाश डाला है।

इसलिए जर्मनी में उत्पादन की पूंजीवादी प्रणाली उस वक्त सामने आयी, जब उसका विरोधी स्वरूप इंगलैंड ओर फ्रांस में वर्गों के भीषण संघर्ष में अपने को पहले ही प्रकट कर चुका था। इसके अलावा इसी बीच जर्मन सर्वहारा वर्ग ने जर्मन बुर्जुआ वर्ग की अपेक्षा कहीं अधिक स्पष्ट वर्ग-चेतना प्राप्त कर ली थी। इस प्रकार, ज आखिर वह घड़ी आयी कि जर्मनी में राजीनतिक अर्थशास्त्र का बुर्जुआ विज्ञान संभव प्रतीत हुआ, ठीक उसी समय वह वास्तव में फिर असंभव हो गया।

ऐसी परिस्थितियों में इसके प्रोफेसर दो दलों में बंट गये। एक दल, जिसमें व्यावहारिक, बुद्धिमान, व्यवसायी लोग थे, बस्तिया के झंडे तले इकट्ठा हुआ, जो कि अशास्त्रीय अर्थशास्त्र का सबसे ज्यादा सतही और इसलिए सबसे ज्यादा अधिकारी प्रतिनिधि है। दूसरा दल, जिसे अपने विज्ञान की प्रोफेसराना प्रतिष्ठा का गर्व था, जॉन स्टुअर्ट मिल का अनुसरण करते हुए ऐसी चीजों में समझौता कराने की कोशिश करने लगा, जिनमें कभी समझौता हो ही नहीं सकता। जिस तरह बुर्जुआ राजनीतिक अर्थशास्त्र के शास्त्रीय काल में जर्मन लोग महज

स्कूली, लड़के नक्कल, पिछलग्गू और बड़ी विदेशी थोक व्यापार कम्पनियों के माल के खुदरा विक्रेता और फेरीवाले बनकर रह गये थे, ठीक वही हाल उनका अब इसके पतन के काल में हुआ।

अतएव जर्मन समाज का ऐतिहासिक विकास जिस विशेष ढंग से हुआ है, वह उस देश में बुर्जुआ राजनीतिक अर्थशास्त्र के क्षेत्र में किसी भी प्रकार के मौलिक कार्य की इजाजत नहीं देता, पर उस अर्थशास्त्र की आलोचना करने की छूट अवश्य दे देता है। जिस हद तक यह आलोचना किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है, उस हद तक वह केवल उसी वर्ग का प्रतिनिधित्व कर सकती है, जिसकी इतिहास में उत्पादन की पूंजीवादी प्रणाली का तख्ता उलट देने और सभी वर्गों को अंतिम रूप से मिटा देने का काम मिला है, अर्थात् उस हद तक वह केवल सर्वहारा वर्ग का ही प्रतिनिधित्व कर सकती है।

जर्मन बुर्जुआ वर्ग के पंडित और अपंडित, सभी तरह के प्रवक्ताओं ने शुरू में 'पूंजी' को खामोशी के जरिये मार डालने की कोशिश की, जैसा कि वे मेरी पहले वाली रचनाओं के साथ भी कर चुके थे। पर ज्यों ही उन्होंने यह देखा कि यह चाल अब समयानुकूल नहीं रह गयी है, त्यों ही उन्होंने मेरी किताब की आलोचना करने के बहाने ''बुर्जुआ मस्तिष्क को शांत करने'' के नुसखे लिखने शुरू कर दिये। लेकिन मजदूरों के अखबारों के रूप में उनको अपने से शक्तिशाली विरोधियों का सामना करना पड़ा- मिसाल के लिए, Volksstaat में जोजेफ दीत्सगेन के लेखों को देखिये और उनका वे आज तक जवाब नहीं दे पाये हैं। [2]

'पूंजी' का एक बहुत अच्छा रूसी अनुवाद 1872 के बसंत में प्रकाशित हुआ था। 3,000 प्रतियों का यह संस्करण लगभग समाप्त भी हो गया है। कीयेव विश्वविद्यालय में राजनीतिक अर्थशास्त्र के प्रोफेसर एन. जीबेर ने 1871 में अपनी रचना 'डेविड रिकार्डो का मूल्य और पूंजी का सिद्धांत' में मूल्य, द्रव्य और पूंजी के मेरे सिद्धांत का जिक्र किया था और कहा था कि जहां तक उसके सार का संबंध है, यह सिद्धांत स्मिथ और रिकार्डो के सिद्धांतों का आवश्यक सिलसिला है। इस सुंदर रचना को पढ़ने पर जो बात पश्चिमी यूरोप के पाठकों को आश्यर्च में डाल देती है, वह यह है कि विशुद्ध सैद्धांतिक प्रश्नों पर लेखक का बहुत ही सुसंगत और दृढ़ अधिकार है।

'पूंजी' में प्रयोग की गयी पद्धति के बारे में जो तरह-तरह की परस्पर विरोधी धारणाएं लोगों ने बना ली है, उनसे मालूम होता है कि इस पद्धति को लोगों ने बहुत कम समझा है। चुनाचे पेरिस के Revue postitiviste ने मेरी इसलिए भर्त्सना की है कि एक तरफ तो मैं अर्थशास्त्र का तत्वमीमासीय ढंग से विवेचन करता हूं और दूसरी तरफ ज़रा सोचिये तो! मैं भविष्य के बावर्चीखाने के लिए नसुखे (शायद कोंतवादी नुसखे?) लिखने के बजाय केवल वास्तविक तथ्यों के आलोचनात्मक विश्लेषण तक ही अपने को सीमित रखत हूं। जहां तक तत्वमीमांसा की शिकायत है, उसके जवाब में प्रोफेसर जीबेर ने यह लिखा है कि ''जहां तक वास्तविक सिद्धांत के विवेचन का संबंध है, मार्क्स की पद्धति पूरी अंग्रेजी धारा की निगमन-पद्धति है, और इस धारा में जो भी गुण और अवगुण है, वे सभी सर्वोतम सैद्धांतिक अर्थशास्त्रियों में पाये जाते हैं।'' एम. ब्लोक ने Les theoriciens du socialisme en Allemagne Extrait du Journal des Economistes, Juillet et Aout 1872 में यह अविष्कार किया है कि मेरी पद्धति विश्लेषणात्मक है, और लिखा है कि ''इस रचना द्वारा श्रीमान मार्क्स ने

सबसे प्रमुख विश्लेषकारी प्रतिभाओं की पंक्ति में स्थान प्राप्त कर लिया है।'' जर्मन पत्रिकाएं, जाहिर है, ''हेगलवादी ढंग से बाल की खाल निकालने'' के खिलाफ चीख रही हैं। सेंट पीटर्सबर्ग के 'वेस्तनिक येव्रोपी ('यूरोपियन मैसंजर') नामक पत्र ने एक लेख में 'पूंजी' की केवल पद्धति की ही चर्चा की है (मई का अंक, 1872, पृ0 427-436)। उसको मेरा खोज का तरीका तो अति यथार्थवादी लगता है, लेकिन विषय का पेश करने का मरेा ढंग, उसकी दृष्टि से, दुर्भाग्यवश जर्मन द्वंद्ववादी है। उसने लिखा है: ''यदि हम विषय को पेश करने के बाहरी रूप के आधार पर अपना मत कायम करें, तो पहली दृष्टि में लगेगा कि मार्क्स प्रत्यवादी दार्शनिकों में भी सबसे अधिक प्रत्ययवादी है, और यहां हम इस शब्द का प्रयोग उसके जर्मन अर्थ मंे, यानी बुरे अर्थ में, कर रहे हैं। लेकिन असल में वह आर्थिक आलोचना के क्षेत्र में अपने समस्त पूर्वागामियों से कहीं अधिक यथार्थवादी है। उसे किसी भी अर्थ में प्रत्ययवादी नहीं कहा जा सकता।'' मैं इस लेखक को उत्तर देने का इससे अच्छा कोई ढंग नहीं सोच सकता कि खुद उसकी आलोचना के कुछ उद्धरणों की सहायता लूं; हो सकता है कि रूसी लेख जिनकी पहंुच के बाहर है, मेरे कुछ ऐसे पाठकों को भी उनमें दिलचस्पी हो।

1859 में बर्लिन से प्रकाशित मेरी पुस्तर्क नत Zur Kritik der politischen oekonomie की भूमिका का एक ऐसा उद्धरण ¼S. IV-VII½ देने के बाद, जिसमें मैंने अपनी पद्धति के भौतिकवादी आधार की चर्चा की है, इस लेखक ने आगे लिखा है: जिसमें मैंने अपनी पद्धति के भौतिकवादी आधार की चर्चा की है, इस लेखक ने आगे लिखा है: ''मार्क्स के लिए जिस एक बात का महत्व है, वह यह है जिन परिघटनाओं की छानबीन में वह किसी वक्त लगा हुआ है, उनके नियम का पता लगाया जाये। और उसके लिए केवल उस नियम का ही महत्व नहीं है, जिसके द्वारा इन परिघटनाओं का उस हद तक नियमन होता है, जिस हद तक कि उनका कोई निश्चित स्वरूप होता है और जिस हद तक कि उनके बची किसी खास ऐतिहासिक काल के भीतर पारस्परिक संबंध होता है। मार्क्स के लिए इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है उनके परिवर्तन का, उनके विकास का, अर्थात् उनके एक रूप् से दूसरे रूप में बदलने का, संबंधों के एक क्रम से दूसरे क्रम में परिवर्तन होने का नियम। इस नियम का पता लगा लेने के बाद वह विस्तार के साथ इस बात की जांच करता है कि यह नियम सामाजिक जीवन में किन-किन रूपों में प्रकट होता है... परिणामस्वरूप मार्क्स को केवल एक ही बात की चिंता रहती है, वह यह कि कड़ी वैज्ञानिक जांच के द्वारा सामाजिक परिस्थितियों की एक के बाद दूसरी आनेवाली अलग-अलग निश्चित व्यवस्थाओं की आवश्यकता सिद्ध करके दिखा दी जाये और अधिक से अधिक निष्पक्ष भाव से उन तथ्यों की स्थापना की जाये, जो मार्क्स के लिए बुनियादी प्रस्थान बिन्दुओं का काम करते हैं। इसके लिए बस इतना बहुत काफभ् है, यदि वह वर्तमान व्यवस्था की आवश्यकता सिद्ध करने के साथ-साथ उस नयी व्यवस्था की आवश्यकता भी सिद्ध कर दे, जिसमें कि वर्तमान व्यवस्था को अनिवार्य रूप से बदल जाना है। और यह परिवर्तन हर हालत में होता है, चाहे लोग इसमें विश्वास करें या न करें और चाहे वे इसके बारे में सजग हों या न हों। मार्क्स सामाजिक प्रगति को प्राकृतिक इतिहास की एक प्रक्रिया के रूप में पेश करता है, जो ऐसे नियमों के अनुसार चलती है, जो न केवल मनुष्य की इच्छा, चेतना और समझ-बूझ से स्वतंत्र होते हैं, बल्कि इसके विपरीत जो इस इच्छा, चेतना और समझ-बूझ को निर्धारित करते हैं... यदि सभ्यता के इतिहास में चेतन तत्व की भूमिका इतनी गौण है, तो यह बात स्वतः स्पष्ट है कि

जिस आलोचनात्मक अन्वेषण की विषय-वस्तु सभ्यता है, वह अन्य किसी भी वस्तु की अपेक्षा चेतना के किसी भी रूप पर अथवा चेतना के किसी भी परिणाम पर कम ही आधारित हो सकता है। तात्पर्य यह है कि यहां विचार नहीं, बल्कि केवल भौतिक परिघटना ही प्रस्थान-बिंदु का काम कर सकती है। इस प्रकार की जांच किसी तथ्य का मुकाबला और तुलना विचारों से नहीं करेगी, बल्कि वह एक तथ्य का मुकाबला और तुलना सिकी दूसरे तथ्य से करने तक ही अपने को सीमित रखेगी। इस जांच के लिए महत्वपूर्ण बात सिर्फ यह है कि दोनों तथ्यों की छानबीन यथसंभव सही-सही की जाये, और यह कि एक दूसरे के संबध में वे एक विकास क्रिया की दो भिन्न अवस्थाओं का सचमुच प्रतिनिधित्व करें; लेकिन सबसे अधिक महत्व इस बात का है कि एक के बाद एक सामने आने वाली उन अवस्थाओं, अनुक्रमों और श्रृंखलाओं के क्रम का कड़ाई के साथ विश्लेषण किया जाये, जिनके रूप में इस प्रकार के विकास की अलग-अलग मंजिलें प्रकट होती है। लेकिन यह कहा जा सकता है कि आर्थिक जीवन के सामान्य नियम तो सदा एक से होते हैं, चाहे वे भूतकाल पर लागू किये जायें अथवा वर्तमान पर। इस बात से मार्क्स साफ तोर पर इनकार करता है। उसके मतानुसार ऐसे अमूर्त नियम होते ही नहीं। इसके विपरीत, उसकी राय में तो प्रत्येक ऐतिहासिक युग के अपने अलग नियम होते हैं... जब समाज विकास के किसी खास युग को पीछे छोड़ देता है और एक मंजिल से दूसरी मंजिल में प्रवेश करने लगता है, तब उसी वक्त से उस पर कुछ दूसरे नियम भी लागू होने लगते हैं। संक्षेप मे कहा जाये, तो आर्थिक जीवन हमारे सामने एक ऐसी परिघटना प्रस्तुत करता है, जो जीवविज्ञान की अन्य शाखाओं में पाये जाने वाले क्रमविकास के इतिहास से मिलत-जुलती है। पुराने अर्थशास्त्रियों ने आर्थिक नियमों को भौतिकी तथा रसयानविज्ञान के नियमों के समान बताकर उनकी प्रकति को गलत समझा था। परिघटनाओं का अधिक गहरा अध्ययन करने पर पता लगा कि सामाजिक अवयवियों के बीच अलग-अलग ढंग के पौधों या पशुओं के समान ही बुनियादी भेद होता है। ऐसे ही नहीं, बल्कि यह कहना चाहिए कि चंूकि इन सामाजिक अवयवियों की पूरी बनावट अलग-अलग ढंग की होती है और उनके अंग अलग-अलग प्रकार के होते हैं तथा अलग-अलग तरह की परिस्थितियों में काम करते हैं, इसलिए उनमें एक ही परिघटना बिल्कुल भिन्न नियमों के अधीन हो जाती है। उदाहरण के लिए, मार्क्स इससे इनकार करता है कि आबादी का नियम प्रत्येक काल और प्रत्येक स्थान में एक सा रहता है। इसके विपरीत, उसका कहना है कि विकास की हरेक मंजिल का अपना आबादी का नियम होता है.... उत्पादक शक्ति का विकास जितना कम-ज्यादा होता है उसके अनुसार सामाजिक परिस्थितियां और उन पर लागू होनेवाले नियम भी बदलते जाते हैं। जब मार्क्स अपने सामने यह काम निर्धारित करता है कि उसको इस दृष्टिकोण से पूंजी के प्रभुत्व के द्वारा स्थापित आर्थिक व्यवस्था का अध्ययन एवं स्पष्टीकरण करना है, तब वह केवल उसी उद्देश्य की सर्वथा वैज्ञानिक ढंग से स्थापना कर रहा होता है, जो आर्थिक जीवन की प्रत्येक परिशुद्ध जांच का उद्देश्य होना चाहिए। ऐसी जांच का वैज्ञानिक महत्व इस बात में है कि वह उन विशेष नियमों को खोलकर रख दे, जिनके द्वारा किसी सामाजिक अवयवी का उत्पत्ति, अस्तित्व, विकास और अंत का तथा उसकी जगह किसी और, अधिक ऊंची श्रेणी के अवयवी द्वारा लिये जाने का नियमन होता है। और असल में मार्क्स की पुस्तक का महत्व इसी बात में हैं।''

यहां पर लेखक ने जिसे मेरी पद्धति समझकर इस सुंदर और (जहां तक इसका संबंध है कि खुद मैने उसे किस तरह लागू किया है) उदार ढंग से चित्रित किया है, वह द्वंद्ववादी पद्धति के सिवा और क्या है? जाहिर है किसकी विषय को पेश करने का ढंग जांच के ढंग से भिन्न होना चाहिए। जांच के समय विस्तार में जाकर सारी सामग्री अधिकार करना पड़ता है, उसके विकास के विभिन्न रूपों का विश्लेषण करना होता है और उनके आतंरिक संबंध का पता लगाना पड़ता है। जब यह काम संपन्न हो जाता है, तभी जाकर कहीं वास्तविक गति का पर्याप्त वर्णन करना संभव होता ह। यदि यह काम सफलतापूर्वक पूरा हो जाता है, यदि विषय वस्तु का जीवन दर्पण के समान विचारों में झलकने लगता है, तब वह संभव है कि हमें ऐसा प्रतीत हो कि जैसे किसी ने अपने दिमाग से सोचकर कोई तस्वीर गढ़ दी है।

मेरी द्वंद्ववादी पद्धति हेगेलवादी पद्धति से न केवल भिन्न है, बल्कि ठीक उसकी उल्टी है। हेगेल के लिए मानव मस्तिष्क की जवीन प्रक्रिया, अर्थात् चिंतन की प्रक्रिया, जिसे ''विचार'' के नाम से उसने एक स्वतंत्र कर्ता तक बना डाला है, वास्तविक संसार की सृजनकर्त्री है और वास्तविक संसार ''विचार'' का बाहरी, इंद्रियगम्य रूप मात्र है। इसके विपरीत, मेरे लिए विचार इसके सिवा और कुछ नहीं कि भौतिक संसार मानव-मस्तिष्क में प्रतिंिबंबित होता है और चिंतन के रूपों में बदल जाता है।

हेगेलवादी द्वंद्ववाद के रहस्मय पहलू की मैंने लगभग तीस वर्ष पहले आलोचना की थी, यानी तब, जब उसका अभी काफी चलन था। लेकिन जिस समय मैं 'पूंजी' के प्रथम खंड पर काम कर रहा था, ठीक उसी समय इन चिड़चिड़े, घमंडी और प्रतिभाहीन..... (योग्य नेता के अयोग्य अनुयायियों) को, जो कि आजकल सुंसंस्कृत जर्मनी में बड़ी लम्बी-लम्बी हांक रहे हैं, हेगेल के साथ ठीक वैसा ही व्यवहार करेन की सूझी, जैसा लेस्सिंग के काल में बहादुर मोसेज मेण्डेल्सन ने स्पिनोज के साथ किया था, यानी उन्होंने भी हेगेल के साथ ''मरे हुए कुत्ते'' जैसा व्यवहार करने की सोची। तब मैंने खुल्लमखुल्ला यह स्वीकार किया कि मैं उस महान विचारक का शिष्य हूं, और मूल्य के सिद्धांत वाले अध्याय में जहां-तहां मैंने अभिव्यक्ति के उस ढंग का उपयोग किया है, जो हेगेल का खास ढंग था। हेगेल के हाथों में द्वंद्ववाद पर रहस्य का आवरण पड़ जाता है, लेकिन इसके बावजूद सही है कि हेगेल ने ही सबसे पहले विस्तृत और सचेत ढंग से यह बताया था कि अपने सामान्य रूप में द्वंद्ववाद किस प्रकार काम करता है। हेगेल के यहां द्वंद्ववाद सिर के बल खड़ा है। यदि आप उसके रहस्यमय आवरण के भीतर छिपे तर्कबुद्धिपरक सारतत्व का पता लगाना चाहते हैं, तो आपको उसे उलटकर फिर पैरों के बल सीधा खड़ा करना होगा।

अपने रहस्यावृत रूप में द्वंद्ववाद का जर्मनी में इसलिए चलन हुआ था कि वह विद्यमान व्यवस्था को गौरवन्वित करता प्रतीत होता था। पर अपने तर्कबुद्धिपकर रूप में वह बुर्जुआ संसार तथा उसके पंडिताऊ प्रोफेसरों के लिए निंदनीय और घृणित वस्तु है, क्योंकि उसमें वर्तमान व्यवस्था की उसकी समझ तथा सकारात्मक स्वीकृति में साथ ही साथ इस व्यवस्था के निषेध और उसके अवश्यंभावी विनाश की स्वीकृति भी शामिल है; क्योंकि द्वंद्ववाद ऐतिहासिक दृष्टि से विकसित प्रत्येक सामाजिक रूप को सतत परिवर्तनशील मानता है और इसलिए उसके अस्थायी स्वरूप का उसके क्षणिक अस्तित्व से कम ख्याल नहीं रखता है;

क्योंकि द्वंद्ववाद किसी चीज को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता और क्योंकि अपने सारतत्व में वह आलोचनात्मक एवं क्रांतिकारी है।

पूंजीवादी समाज की गति में जो अंतर्विरोध हैं, वे व्यावहारिक बुर्जुआ के दिमाग पर सबसे अधिक जोर से उस सामयिक चक्र के परिवर्तनों के रूप में प्रभाव डालते हैं, जिससे आधुनिक उद्योग को गुजरना पड़ता है और जिसका सर्वोच्च बिंदु सर्वव्यापी संकट होता है। वह संकट एक बार फिर आने को है, हालांकि अभी वह अपनी प्रारंभिक अवस्था में ही है; और इस संकट की लपेट इतनी सर्वव्यापी होगी और उसका प्रभाव इतना तीव्र होगा कि वह इस नये पवित्र प्रशाई-जर्मन साम्राज्य के बरसात में कुकुरमुत्तों की तरह पैदा होनेवाले नये नवाबों के दिमागों में भी द्वंद्ववाद को ठोक-ठोक कर घुसा देगा।

लंदन, 24 जनवरी 1873 कार्ल मार्क्स

---

1 देखिये मेरी रचना Zur Kirtik der Politischen Oekonomie, Berlin, 1859, S. 39

2 जर्मनी के सतही राजनीतिक अर्थशास्त्र के चिकनी-चुपड़ी बातें करनेवाले बकवासियों ने मेरी पुस्तक की शैली की निंदा की है। 'पूंजी' के साहित्यिक दोषों का जितना अहसास मुझे है, उससे ज्यादा किसी को नहीं हो सकता। फिर भी मै इन महानुभवों के तथा उनको पढ़नेवाली जनता के लाभ और मनोरंजन के लिए इस संबंध में एक अंग्रेजी तथा एक रूसी समालोचना को उद्धृत करूंगा। Saturday Review ने, जो मेरे विचारों का सदा विरोधी रहा है, पहले संस्करण की आलोचना करते हुए लिखा था: "विषय को जिस ढंग से पेश किया गया है, वह नीरस से नीरस आर्थिक प्रश्नों में भी एक आनोखा आकर्षण पैदा कर देता हैं'8 'सांक्त-पेतेरबुगर्स्किये वेदोमोस्ती' (सेंट पीर्सबर्ग जर्नल') ने अपने 8 (20) अप्रैल 1872 के अंक में लिखा है: "एक दो बहुत ही खास हिस्सों को छोड़कर विषय को पेश करने का ढंग ऐसा है कि वह सामान्य पाठक की भी समझ में आ जाता है, खूब साफ़ हो जाता है और वैज्ञानिक दृष्टि से बहुत जटिल होते हुए भी असाधारण रूप से सजीव हो उठता है। इस दृष्टि से लेखक... अधिकतर जर्मन विद्वानों से बिल्कुल भिन्न है, जो.... अपनी पुस्तकें ऐसी नीरस और दुरूह भाषा में लिखते हैं कि साधारण इनसानों के सिर तो उनसे टकराकर ही टूट जाते हैं।"

---

# फ्रांसीसी संस्करण की भूमिका

**नागरिक मौरिस लशात्रे के नाम**

प्रिय नागरिक,

'पूंजी' के अनुवाद का एक धारावाहिक के तोर पर प्रकाशन का आपका विचार प्रशंसनीय है। इस रूप में पुस्तक मजूदर वर्ग के लिए अधिक सुलभ बन जायेगी, और मेरे लिए यह बात सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

यह तो आपके सुझाव का अच्छा पहलू हुआ, पर अब तस्वीर के दूसरे पहलू पर भी गौर करें: मैंने विश्लेषण की जिस पद्धति का प्रयोग किया है और जिसका इसके पहले कभी आर्थिक विषयों के लिए प्रयोग नहीं हुआ था, उसने शुरू के अध्यायों को पढने में कुछ कठिन बना दिया है। फ्रांसीसी पाठक सदा परिणाम पर पहुंचने के लिए व्यग्र और यह जानने को उत्सुक रहते हैं कि जिन तात्कालिक प्रश्नों ने उन्हें उद्वेलित किया हुआ है, उनका सामान्य सिद्धांतों के साथ क्या संबंध है। मुझे डर है कि तेजी से आगे न बढ़ पाने के कारण उन्हें कुछ निराशा होगी।

यह एक ऐसी कठिनाई है, जिसे दूर करना मेरी शक्ति के बाहर है। मैं तो केवल इतना ही कर सकता हूं कि जिन पाठकों को सत्य की खोज करने की धुन है, उनको पहले से चेतावनी देकर आनेवाली कठिनाई का सामना करने के लिए तैयार कर दूं। विज्ञान का कोई सीधा और सपाट राजमार्ग नहीं है, और उसकी प्रकाशमान चोटियों तक वे ही पहुंच सकते हैं, जो उसके खड़े रास्तों की थका देनेवाली चढ़ाई से नहीं डरते।

आपका कृतज्ञ

लंदन, 18 मार्च 1872 कार्ल मार्क्स

# फ्रांसीसी संस्करण का अनुकथन

मि. जे. रॉय ने एक ऐसा संस्करण तैयार करने की बीड़ा उठाया था, जो अधिक से अधिक सही हो और यहां तक कि जिसमें मूल का अक्षरशः अनुवाद किया गया हो, और उन्होंने यह काम बड़ी निष्ठा के साथ पूरा किया है। लेकिन उनकी इसी निष्ठा ने मुझे उनके पाठ में कुछ तब्दीलियां करने के लिए मजबूर कर दिया है, ताकि वह ज्यादा आसानी से पाठक की समझ में आ सके। ये तब्दीलियां आये रोज करनी होती थीं, क्योंकि किताब टुकड़ों-टुकड़ों में प्रकाशित हो रही थी, और चूंकि सब तब्दीलियों में बराबर सतर्कता नहीं बरती गयी, इस, लिए लाजिमी तौर पर यह नतीजा हुआ कि शैली में ऊबड़खाबड़पन आ गया।

पुस्तक को दोहराने का काम एक बार हाथ में लेने पर मैं मूल पाठ (दूसरे जर्मन संस्करण) को भी दोहराने लगा, ताकि कुछ युक्तियों को और अधिक सरल बना दूं, दूसरी कुछ युक्तियों को और पूर्ण कर दूं, कुछ नयी ऐतिहासिक सामग्री या नये आंकड़े शामिल कर दूं और कुछ आलोचनात्मक टिप्पणियां जोड़ दूं, इत्यादि। इसलिए इस फ्रांसीसी संस्करण में साहित्यक दोष चाहे जैसे रह गये हों, इसका मूल संस्करण से स्वतंत्र वैज्ञानिक महत्व है और इसे उन पाठकों को भी देखना चाहिए, जो जर्मन संस्करण से परिचित हैं।

नीचे मैं दूसरे जर्मन संस्करण के अनुकथन के उन अंशों को दे रहा हूं, जिनमें जर्मनी में राजनीतिक अर्थशास्त्र के विकास और मेरी इस रचना में प्रयोग की गयी पद्धति की चर्चा की गयी है।

लंदन, 28 अप्रैल, 1875 कार्ल मार्क्स

# तीसरे जर्मन संस्करण की भूमिका

इस तीसरे संस्करण को प्रेस के लिए खुद तैयार करना मार्क्स के भाग्य में नहीं बदा था। उस सशक्त विचारक की, जिसकी महानता के सामने अब उसके विरोधी तक शीश नवाते हैं, 14 मार्च 1883 को मृत्यु हो गयी है।

मार्क्स की मृत्यु से मैंने अपना सबसे अच्छा, सबसे सच्चा और चालीस वर्ष पुराना मित्र खो दिया है। वह मेरा ऐसा मित्र था, जिसका मुझ पर इतना ऋण है, जिसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। उसकी मृत्यु के बाद इस तीसरे संस्करण के और साथ ही उस द्वितीय खंड के प्रकाशन की देख-रेख की जिम्मेदारी मुझ

पर आयी, जिसे मार्क्स हस्तलिपि के रूप में छोड़ गये थे। अब मुझे यहां पाठक को यह बताना है कि इस जिम्मेदारी के पहले हिस्से को मैंने किस ढंग से पूरा किया है।

मार्क्स का शुरू में यह इरादा था कि प्रथम खंड के अधिकतर भाग को फिर से लिख डालें; वह बहुत से सैद्धांतिक नुकतों को ज्यादा सही ढंग से पेश करना चाहते थे, कुछ नये नुकते जोड़ना और नवीनतम ऐतिहासिक सामग्री तथा आंकड़े शामिल करना चाहते थे। परंतु उनकी बीमारी ने और द्वितीय खंड का जल्द से जल्द अंतिम संपादन करके उसे तैयार कर देने की आवश्यकता ने उनको यह योजना त्याग देने पर मजबूर कर दिया। तय हुआ कि महज बहुत ही जरूरी तब्दीलियां की जायें और केवल वे ही नये अंश जोड़े जायें, जो फ्रांसीसी संस्करण (Le Capital, par karl marx, Paris, Lachatre, 1872-1875) में पहले ही मौजूद हैं।

मार्क्स जो किताब छोड़ गए हैं, उनमें 'पूंजी' की एक जर्मन प्रति थी, जिसे उन्होंने खुद जहां-तहां सही किया था और जिसमें फ्रांसीसी संस्करण के हवाले भी दिये थे; उसके साथ साथ उन किताबों में फ्रांसीसी प्रति भी थी, जिसमें उन्होंने ठीक उन अंशों केा इंगित किया था, जिनको इस्तेमाल करने की आवश्यकता थी। कतिपय अपवादों को छोड़कर ये सारे परिवर्तन और मूल पाठ में जोड़े गये नये अंश पुस्तक के केवल उस आखिरी (अंग्रेजी संस्करण के उपांतिम) भाग तक ही सीमित हैं, जिसका शीर्षक है 'पूंजी का संचय', यहां पहला वाला पाठ दूसरी सभी जगहों की तुलना में मूल मसविदे के अधिक अनुरूप था, जब कि उससे पहले वाले हिस्सों को ज्यादा ध्यान के साथ दोहराया जा चुका था। इसलिए शैली अधिक सजीव और जैसे कि एक ही सांचे में ढाली गयी लगती थी, लेकिन साथ ही उसमें कुछ ज्यादा लापरवाही भी झलकती थी, उसमें अंग्रेजी मुहावरे और प्रयोग छाये हुए थे और अनेक स्थानों पर भाषा स्पष्ट हो गयी थी; जहां तहां लगता था कि दलीलों को पेश करने में जैसे कुछ छूट गया है और कुछ महत्वपूर्ण बातों की तरफ इशारा भर करके छोड़ दिया गया है।

जहां तक शैली का संबंध है, कुछ अनुभागों के टुकड़ों को मार्क्स ने खुद अच्छी तरह दोहरा दिया था, और इस प्रकार तथा अनेक जबानी सुझावों के जरिये भी वह मुझे यह बता गये थे कि अंग्रजी के पारिभाषित शब्दों तथा अन्य अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्दों तथा अन्य अंग्रेजी मुहावरों और प्रयोगों को पुस्तक से निकालने में मैं कितनी दूर तक छूट ले सकता हूं। मार्क्स खुद यह काम करते, तो नये जोड़े हुए अंशों और पूरक सामग्री को हर हालत में दोहराते और साफ सुथरी फ्रांसीसी को अपनी नपी तुली जर्मन से बदल देते। लेकिन मुझे इन अंशों को जर्मन संस्करण में जोड़ते समय केवल इतने से ही संतोष कर लेना पड़ा कि उनका मूल पाठ के साथ अधिक से अधिक ताल मेल बैठा दूं।

इस प्रकार इस तीसरे संस्करण में मैंने एक शब्द भी उस वक्त तक नहीं बदला है, जब तक कि मुझे यह विश्वास नहीं हो गया कि मार्क्स खुद भी उसे जरूर बदल देते। 'पूंजी' में उस ऊल जलूल शब्दावली को लाने की बात तो मैं कभी सोच ही नहीं सकता था, जिसका आजकल बहुत चलन है और जिसे इस्तेमाल करने का जर्मन अर्थशास्त्रियों को बहुत शौक है- इस कपड़ सपड़ बोली में, मिसाल के लिए,जो आदमी दूसरों को नकद पैसे देकर उन्हें और मजदूरी के एवज मं जिसका श्रम उससे छीन लिया जाता है, उसे श्रम ग्रहीता (Arbeit *nehmer*) कहा जाता है। फ्रांसीसी भाषा में भी "travail" (''श्रम'') शब्द रोजमर्रे के जीवन में ''धंधे'' के अर्थ

में इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन यदि कोई अर्थशास्त्री पूंजीपति को donneur de travail (श्रम-दाता) या मजदूर को receveur de travail (श्रम ग्रहीता) कहने लगे, तो फ्रांसी के लोग उसे ठीक ही पागल समझेंगे।

अंग्रेजी मुद्रा, मापों और वजनों को, जिनको पूरी किताब में इस्तेमाल किया गया है, उनके समतुल्य जर्मन मुद्रा, मापों और वजनों में बदल देने की भी मैंने आजादी नहीं ली है। जिस समय पहला संस्करण प्रकाशित हुआ था, उस समय जर्मनी में इतने विभिन्न प्रकार की मापें और वजन इस्तेमाल किये जाते थे कि जितने साल में दिन होते हैं; इसके अलावा मार्क भी दो तरह के थे (उस समय राइख्समार्क केवल जेतबेर की कल्पना में ही मौजूद था, जिसने कि चौथे दशक के अंत में उसका आविष्कार किया था), गुल्डन दो तरह के थे और टालर कम से कम तीन तरह के थे, जिनमें से एक neues Zweidritte (नया दो तिहाई) कहलाता था। प्राकृतिक विज्ञानों में दशमिक प्रणाली का चलन था, दुनिया की मंडी में अंग्रेजी मापें और वजन चलते थे। ऐसी परिस्थिति में एक ऐसी किताब में अंग्रेजी माप की इकाइयों का प्रयोग करना बिल्कुल स्वाभाविक था, जिसे लगभग सब के सब तथ्यात्मक प्रमाण केवल ब्रिटेन के औद्योगिक संबंधों से लेने पड़े थे। यह आखिरी कारण आज भी निर्णायक महतव रखता है, खासतौर पर इसलिए कि दुनिया की मंडी के उन जैसे संबंधों में बहुत कम परिवर्तन हुआ है और मुख्य उद्योगों पर - यानी लोहे तथा कपास के उद्योगों पर आज भी अंग्रेजी वजनों और मापों का ही लगभग एकच्छत्र अधिकार है।

अंत में कुछ शब्द मार्क्स द्वारा उद्धरणों का प्रयोग करने की कला के संबंध में कह भी दिये जायें, जिसे लोगों ने बहुत कम समझा है। जब उद्धरणों में केवल तथ्यों का विवरण या किसी चीज का वर्णन मात्र होता हे, जैसे कि, मिसाल के लिए इंगलैंड के सरकारी प्रकाशनों के उद्धरणों में, तब जाहिर है, उनको केवल दस्तावेजी प्रमाण के रूप में इस्तेमाल किया गया है। लेकिन जब दूसरे अर्थशास्त्रियों के सैद्धांतिक विचारों को उद्धृत किया जाता है, तब ऐसा नहीं होता। वहां उद्धरण का उद्देश्य केवल यह बताना होता है कि विकास के दौरान अमुक आर्थिक विचार की स्पष्ट रूप में सबसे पहले किसने, कहां और कब स्थापना की थी। ऐसे उद्धरण को चुनते समय केवल इसी बात को ध्यान में रखा गया है कि वह उद्धरण जिस आर्थिक अवधारणा से संबंध रखता है, उसका इस विज्ञान के इतिहास के लिए कुछ महत्व हो और अपने काल की आर्थिक परिस्थिति को कमोबेश सैद्धांतिक अभिव्यक्ति हो। लेकिन इस बात का कोई महत्व नहीं है कि लेखक के दृष्टिकोण से इस अवधारणा में आज भी केाई निरपेक्ष अथवा सापेक्ष सचाई है या वह एकदम गुजरे हुए इतिहास की चीज बन गयी है। अतएव, ये उद्धरण केवल मूल पाठ की चलती टीका का, यानी जो टीका आर्थिक विज्ञान के इतिहास से उधार ली गयी है, उसका काम करते हैं और आर्थिक सिद्धांत के क्षेत्र में उठाये गये प्रगति के कुछ अधिक महत्वपूर्ण कदमों की तारीखों की तथा उनके प्रवर्तकों के नामों की पुष्टि करते हैं। यह करना उस विज्ञान के लिए अत्यंत आवश्यक था, जिसके इतिहासकारों ने अभी तक केवल अपने मतलब भरे अज्ञान के लिए ही नाम कमाया है, जो कि पदलोलुपों का गुण होता है। और इससे यह बात भी समझ में आ जानी चाहिए कि दूसरे संस्करण के अनकथन के अनुसार मार्क्स को क्यों केवल कुछ अतयंत असाधारण प्रसंगों में ही जर्मन अर्थशास्त्रियों को उद्धृत करने की आवश्यकता पड़ी थी।

आशा है कि द्वितीय खंड 1884 के दौरान प्रकाशित हो जायेगा।

लंदन, 7 नवंबर 1883 फ्रेडरिक एंगेल्स

# अंग्रेजी संस्करण की भूमिका

'पूंजी' के एक अंग्रेजी संस्करण के प्रकाशन की सफाई देने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके विपरीत, इस बात की सफाई की आशा की जा सकती है कि इस अंग्रेजी संस्करण में इतनी देर क्यों हुई, जब कि इस पुस्तक में जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है, उनकी इंगलैंड और अमरीका, दोनों देशों के नियतकालिक प्रकाशनों तथा समकालीन साहित्य में पिछले कुछ वर्षों से लगातार चर्चा हो रही है, आलोचना प्रत्यालोचना हो रही है, तरह तरह के अर्थ लगाये जा रहे हैं और अर्थ का अनर्थ किया जा रहा है।

1883 में इस पुस्तक के लेखक की मृत्यु के शीघ्र बाद जब यह बात स्पष्ट हो गयी कि इसके एक अंग्रेजी संस्करण की सचमुच आवश्यकता है, मि. सैम्युएल मूर ने, जो अनेक वर्षों तक मार्क्स तथा इन पंक्तियों के लेखक के मित्र रहे हैं और जिनसे अधिक शायद और किसी को इस पुस्तक की जानकारी नहीं है, उस अनुवाद की जिम्मेदारी अपने कंधों पर ली, जिसे मार्क्स की साहित्यिक वसीयत के प्रबंधक जनता के सामने पेश करने के लिए उत्सुक थे। ख्याल यह था कि अनुवाद की हस्तलिपि को मैं मूल रचना से मिलाकर देखूंगा और यदि मुझे कोई परिवर्तन आवश्यक प्रतीत होंगे, तो अनुवादक को बता दूंगा। जब धीरे धीरे यह मालूम हुआ कि मि. मूर अपने पेशे से संबंधित कामधाम के कारण उतनी जल्दी अनुवाद खत्म नहीं कर पा रहे हैं, जितनी जल्दी हम सब लोग चाहते थे, तो हमने डा. एवेलिंग का यह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया कि काम का एक भाग वह निपटा देंगे। साथ ही मार्क्स की सबसे छोटी पुत्री श्रीमती एवलिंग ने यह तत्परता प्रकट की कि वह उद्धरणों को देख लेंगी कि सब ठीक हैं या नहीं, और मार्क्स ने अंग्रेजी लेखकों तथा सरकारी रिपोर्टों से जो जो अनेक अंश लिये थे तथा जिनको उन्होंने जर्मन भाषा में उल्टा करके अपनी पुस्तक में इस्तेमाल किया था, उनका मूल अंग्रेजी पाठ अनुवाद में शामिल कर देंगी। कतिपय अपरिहार्य अपवादों के सिवा पूरी पुस्तक में यह बात कर दी गयी है।

पुस्तक के निम्नलिखित हिस्सों का अनुवाद डा. एवेलिंग ने किया हैः (1) दसवां अध्याय ('काम का दिन') और ग्यारहवां अध्याय ('बेशी मूल्य की दर और बेशी मूल्य की राशि'); (2) छठा भाग ('मजदूरी, जिसमें अध्याय 13-22 शामिल हैं); (3) चौबीसवें अध्याय का अंतिम हिस्सा, पच्चीसवां अध्याय और पूरा आठवां भाग (छब्बीसवें अध्याय से तैतीसवें अध्याय तक) शामिल हैं; (4) लेख की दो भूमिकाएं। बाकी पूरी पुस्क का अनुवाद मि. मूर ने किया है। इस प्रकार जहां प्रत्येक अनुवादक केवल अपने अपने हिस्से के काम के लिए जिम्मेदार हैं, वहां मैं पूरे अनुवाद के लिए समान रूप से जिम्मेदार हूं।

इस अनुवाद में हमने जिस तीसरे जर्मन संस्करण को बराबर अपना आधार बनाया है, उसे मैंने, लेखक जो नोट छोड़े गये थे, उनकी मदद से 1883 में तैयार किया था। इन नोटों में मार्क्स ने बताया था कि दूसरे संस्करण के किन अंशों को 1873 में प्रकाशित फ्रांसीसी संस्करण [1] के किन अंशों से बदल दिया जाये। इस प्रकार दूसरे संस्करण के पाठ में जो परिवर्तन किये गये, वे आमतौर पर उन परिवर्तनों से मेल खाते थे, जिनके बारे में मार्क्स कुछ हस्तलिखित हिदायतें छोड़ गये हैं। ये हिदायतें उन्होंने उस अंग्रेजी अनुवाद के संबंध में दी थीं, जिसकी योजना लगभग दस वर्ष पहले अमरीका में नायी गयी थी, मगर जिसका विचार

मुख्यतया एक योग्य और समर्थ अनुवादक के अभाव के कारण बाद में छोड़ दिया गया था। इन हिदायतों की हस्तलिपि में अपने पुराने मित्र, होबोकेन, न्यूजर्सी, के निवासी मि. एफ. ए. जोर्गे से प्राप्त हुई थी। उसमें फ्रांसीसी संस्करण से कुछ और अंश लेने की भी बात थी, मगर चूंकि ये हिदायतें मार्क्स की उन आखिरी हिदायतों से बहुत पुरानी थीं, जो वह तीसरे संस्करण के लिए छोड़ गये थे, इसलिए कुछ खास जगहों को छोड़कर उनका आमतौर पर इस्तेमाल मैंने उचित नहीं समझा। मुख्यतौर पर मैंने इन हिदायतों का इस्तेमाल उन जगहों पर किया है, जहां उनसे कुछ कठिनाइयों को हल करने में मदद मिलती। इसी प्रकार अधिकतर कठिन अंशों के संबंध में फ्रांसीसी पाठ से भी यह मालूम करने में मदद ली गयी है कि अनुवाद में जहां कहीं मूल पाठ के संपूर्ण अर्थ का कोई एक अंश छोड़ना जरूरी हुआ है, वहां खुद लेखक क्या छोड़ना उचित समझता।

किंतु एक कठिनाई ऐसी है, जिससे हम पाठक को नहीं बचा सकें। इस पुस्तक में कुछ परिभाषित शब्दों का प्रयोग ऐसे अर्थों में हुआ है, जो न केवल साधारण जीवन में, बल्कि साधारण राजनीतिक अर्थशास्त्र में भी इन शब्दों को जिन अर्थों में लिया जाता है, उनसे भिन्न हैं। लेकिन इस कठिनाई से बचना संभव न था। किसी भी विज्ञान का जब कोई नया पहलू सामने आता है, तो उस विज्ञान के पारिभाषिक शब्दों में भी एक क्रांति हो जाती है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण रसायन विज्ञान है, जिसमें लगभग हर बीस साल बाद पूरी शब्दावली आमूल बदल जाती है और जिसमें आपको शायद ही कोई ऐसा कार्बनिक यौगिक मिलेगा, जिसका नाम अभी तक अनेक बार न बदल चुका हो। राजनीतिक अर्थशास्त्र ने आमतौर पर व्यापारिक एवं औद्योगिक जीवन के पारिभाषिक शब्दों को ज्यों का त्यों इस्तेमाल करके संतोष किया है। वह यह देखने में बिलकुल असमर्थ रहा है कि ऐसा करके उसने अपने आपको उन विचारों के संकुचित दायरे में बंद कर लिया है, जिनको ये पारिभाषिक शब्द व्यक्त करते हैं। उदाहरणतः, यह बात अच्छी तरह मालूम होते हुए भी कि मुनाफा और किराया दोनों ही मजदूर के उत्पाद के उस हिस्से के टुकड़े या अंश मात्र हैं, जिसकी उसे उजरत नहीं मिलती और जिसको उसे अपने नियोजक को दे देना जड़ता है। (नियोजक ही उस हिस्से पर सबसे पहले अधिकार जमाता है, हालांकि वह उसका अंतिम और एकमात्र स्वामी नहीं है), फिर भी क्लासिकीय राजनीतिक अर्थशास्त्र मुनाफे और किराये की दूसरी से ली हुई इन परिकल्पनाओं से कभी आगे नहीं बढ़ा और उसने उत्पाद के इस हिस्से पर, जिसकी मजदूर को कोई उजरत नहीं मिलती (और जिसे मार्क्स ने बेशी उत्पाद का नाम दिया है) उसकी संपूर्ण अखंडता में कभी विचार नहीं किया और इसलिए वह न तो कभी उसकी उत्पत्ति के रहस्य तथा उसके स्वरूप को साफ साफ समझ पाया और न ही उन नियमों को, जिनके अनुसार बाद को इस हिस्से के मूल्य का वितरण होता है। इसी प्रकार, खेती और दस्तकारी को छोड़कर बाकी सारे उद्योग धंधों को, बिना किसी भेदभाव के मैन्यूफैक्चर शब्द में शामिल कर लिया जाता है और इस तरह आर्थिक इतिहास के दो बड़े बुनियादी तौर पर भिन्न युगों का सारा अंतर खत्म कर दिया जाता हैः एक तो खास मैन्यूफैक्चर का काल, जो हस्तश्रम के विभाजन पर आधारित था, और दूसरा आधुनिक उद्योगों का काल, जो मशीनों पर आधारित है। फिर भी जाहिर है कि जो सिद्धांत आधुनिक पूंजीवादी उत्पादन को मनुष्य जाति के आर्थिक इतिहास की एक अस्थायी अवस्था मात्र समझता है, उसका काम उन पारिभाषिक शब्दों से नहीं

चल सकता, जिनको वे लेखक इस्तेमाल करने के आदी हैं, जो उत्पादन के इस रूप को अजर अमर और अंतिम समझते हैं।

दूसरी रचनाओं के अंश उद्धृत करने का लेखक ने जो ढंग अपनाया हे, दो शब्द उसके बारे में कह देना अनुचित न होगा। जैसा कि साधारण चलन है, अधिकतर स्थानों पर उद्धरण यह इंगित करने के लिए दिये गये हैं कि कोई स्थापना सबसे पहले किस ने, कहां और कब स्पष्ट रूप में पेश की थी। ऐसा वहां किया गया है, जहां उद्धृत स्थापना इसलिए महत्व रखती है कि वह अपने काल की सामाजिक उत्पादन एवं विनिमय की विद्यमान परिस्थितियों को कमोबेश पर्याप्त रूप में व्यक्त करती थी। मार्क्स उस स्थापना को आमतौर पर सही समझते थे या नहीं, इसका उसे उद्धृत करने के सिलसिले में कोई महत्व नहीं है। इस तरह, इन उद्धरणों के रूप में मूल पाठ के साथ साथ विज्ञान के इतिहास से ली गयी एक धारावाहिक टीका भी मिल जाती है।

हमारे इस अनुवाद में इस रचना का केवल प्रथम खंड ही आया है। लेकिन यह प्रथम खंड बहुत हद तक अपने में एक संपूर्ण रचना है और बीस साल से एक स्वतंत्र रचना माना भी जाता रहा है। जर्मन में मेरे द्वारा 1885 में संपादित द्वितीय खंड निश्चय ही तृतीय खंड के बिना अपूर्ण है, और तृतीय खंड 1887 के खत्म होने के पहले प्रकाशित नहीं हो सकता। जब तृतीय खंड मूल जर्मन में प्रकाशित हो जायेगा, तभी इन दोनों खंडों का अंग्रेजी संस्करण तैयार करने की बात सोयी जायेगी।

यूरोप में 'पूंजी को अकसर ''मजदूर वर्ग की बाइबल'' कहा जाता है। जिसे मजदूर आंदोलन की जानकारी है, वह इस बात से इनकार नहीं करेगा कि यह पुस्तक जिन निष्कर्षों पर पहुंची है, वे न केवल जर्मनी और स्विट्जरलैंड में, बल्कि फ्रांस, हालैंड, बेल्जियम, अमरीका में और यहां तक कि इटली और स्पेन में भी दिन प्रतिदिन अधिकाधिक स्पष्ट रूप में इस महान आंदोलन के बुनियादी सिद्धांत बनते जा रहे हैं और हर जगह मजदूर वर्ग में इस बात की अधिकाधिक समझ पैदा होती जा रही है कि उसकी हालत तथा उसकी आशाएं आकांक्षाएं अपने सबसे पूर्ण रूप में इस पुस्तक के निष्कर्षों में व्यक्त हुई हैं। और इंगलैंड में भी मार्क्स के सिद्धांत इस समय भी उस समाजवादी आंदोलन पर सशक्त प्रभाव डाल रहे हैं, जो ''सुसंस्कृत'' लेागों में मजदूरवर्ग से कम तेजी से नहीं फैल रहा है। लेकिन बात इतनी ही नहीं है। वह समय तेजी से नजदीक आ रहा है, जब इंगलैंड की आर्थिक स्थिति का गहरा अध्ययन एक राष्ट्रीय आवश्यकता के रूप में अनिवार्य हो जायेगा। उत्पादन का और इसलिए मंडियों का भी लगातार और तेजी के साथ विस्तार किये बिना इस देश की औद्योगिक व्यवस्था का काम करना असंभव है, और यह व्यवस्था एकदम ठप होती जा रही है। स्वतंत्र व्यापार अपने साधनों को समाप्त कर चुका है; यहां तक कि मैंचेस्टर को भी अपने इस पुराने पड़ चुके आर्थिक उपदेश में संदेह पैदा हेा गया है।[2] अंग्रेजी उत्पादन को हर जगह न सिर्फ रक्षित मंडियों में, बल्कि तटस्थ मंडियों में भी, और यहां तक कि चैनेल के इस तरफ भी, तेजी से विकसित होते हुए विदेशी उद्योगों का सामना करना पड़ रहा है। उत्पादक शक्ति की जहां गुणोत्तर श्रेणी में वृद्धि होती है, वहां मंडियों का विस्तार अधिक से अधिक समांतर श्रेणी में होता है। ठहराव, समृद्धि, अति उत्पादन ओर संकट का दसवर्षीय चक्र, जो 1825 से 1867 तक लगातार चलता रहा, अब थम गया मालूम होता है, लेकिन हमें महज एक स्थायी और चिरकालिक मंदी की निराशा के दलदल में धकेलने के लिए ही। समृद्धि के जिस काल की प्रबल

अकांक्षा की जा रही थी, वह अब नहीं आयेगा। जब जब हमें लगता है कि उसके आगमन के लक्षण दिखायी दे रहे हैं, तब तब वे फिर शून्य में विलीन हो जाते हैं। इस बीच हर बार जब जाड़े का मौसम आता है, तो यह गंभीर सवाल नये सिरे से उठ खड़ा होता है कि ''बेकारों का क्या किया जाये''। बेकारों की संख्या हर वर्ष बढ़ती जा रही हे, पर इस सवाल का जवाब देने वाला कोइ्र नहीं मिलता; और हम उस क्षण का लगभग सही अनुमान लगा सकते हैं, जब बेकारों का धैर्य समाप्त हो जायेगा और वे अपने भाग्य का निर्णय खुद करने के लिए उठ खड़े होंगे। ऐसे क्षण में उस आदमी की आवाज निश्चय ही सुनी जानी चाहिए, जिसका पूरा सिद्धांत इंगलैंड के आर्थिक इतिहास तथा दशा के आजीवन अध्ययन का परिणाम है और जो इस अध्ययन के आधार पर इस नतीजे पर पहूंचा था कि कम से कम यूरोप में इंगलैंड ही एकमात्र ऐसा देश है, जहां वह सामाजिक क्रांति, जिसका होना अनिवार्य है, सर्वथा शांतिपूर्ण और कानूनी उपायों के द्वारा हो सकती है। निश्चय ही वह आदमी इसके साथ साथ यह जोड़ना भी कभी नहीं भूला था कि यह आशा शायद ही की जा सकती है कि अंग्रेज शासक वर्ग बिना एक ''दासता समर्थन विद्रोह'' का संगठन किये इस शांतिपूर्ण एवं कानूनी क्रांति के सामने आत्मसमर्पण कर देंगे।

5 नवम्बर 1886 फ्रेडरिक एंगेल्स

---

1. Le Capital, par Karl Marx. Traduction de M.J. Roy, entierement revisee par l'auteur, Paris, Lachatre. इस अनुवाद में खासकर, पुस्तक के बाद वाले हिस्से में, दूसरे जर्मन संस्करण के पाठ की तुलना में काफी परिवर्तन किये गए हैं और कुछ नये अंश जोड़े गये हैं।

2 आज तीसरे पहर मैंचेस्टर के चैंबर ऑफ कामर्स की त्रैमासिक बैठक हुई। उसमें स्वतंत्र व्यापार के प्रश्न पर जोरदार बहस हुई। एक प्रस्ताव पेश किया गा, जिसमें कहा गया था कि ''40 वर्ष तक इस बात की वृथा प्रतीक्षा कर चुकने के बाद कि दूसरे राष्ट्र भी स्वतंत्र व्यापार के मामले में इंगलैंड का अनुकरण करेंगे, चैंबर समझता है कि अब इस मत पर पुनर्विचार का समय आ गया हैं'' प्रस्ताव ठुकरा दिया गया, पर केवल एक के बहुमत सेः उसके पक्ष में 21 और विपक्ष में 22 मत पड़े। 1 Evening Standard, Nov. 1 1886.

# चौथे जर्मन संस्करण की भूमिका

चौथे संस्करण के लिए जरूरी था कि मैं जहां संभव हो, मूल पाठ और पाद-टिप्पणियों दोनों का अंतिम रूप तैयार कर दूं। नीचे दिये हुए संक्षिप्त स्पष्टीकरण से मालूम हो जायेगा कि मैंने यह काम किस ढंग से पूरा किया है।

फ्रांसीसी संस्क्रण तथा मार्क्स की हस्तलिखित हिदायतों को एक बार फिर मिलाने के बाद मैंने फ्रांसीसी अनुवाद से कुछ और अंश लेकर जर्मन पाठ में जोड़ दिये हैं। ये अंश पृ. 80 (तीसरे संस्करण का पृ. 88) [वर्तमान संस्करण के पृ. 130-132], पृ. 458-460, (तीसरे संस्करण का पृ. 509-510) [वर्तमान संस्करण के पृ. 555-559],* पृ. 547-551 (तीसरे संस्करण का पृ. 600) [वर्तमान संस्करण के पृ. 656-659], पृ. 591-593 (तीसरे संस्करण का पृ. 644) [वर्तमान संस्करण के पृ. 702-704], और पृष्ठ 596 (तीसरे संस्करण का पृ. 648) [वर्तमान संस्करण के पृ. 707] की पाद टिप्पणी 1 में मिलेंगे। फ्रांसीसी और अंग्रेजी संस्करणों का अनुकरण करते हुए मैंने खान मजदूरों से संबंधित लंबी पाद टिप्पणी मूल पाठ में शामिल कर दी है (तीसरे संस्करण का पृ. 509-515 चौथे संस्क्रण के पृ. 461-467) [वर्तमान संस्करण के पृ. 559-566]। इसके अलावा जो और छोटे छोटे परिवर्तन किये गये हैं, वे सर्वथा तकनीकी ढंग के हैं।

इसके अलावा मैंने कुछ नयी व्याख्यात्मक पाद टिप्पणियां जोड़ी हैं, खासकर उन स्थलों पर जहां वे बदली हुई ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण आवश्यक प्रतीत होती थीं। इन तमाम नयी टिप्पणियों को बड़े कोष्ठकों में बंद किया गया है और उनके साथ या तो मेरे नाम के प्रथमाक्षर हैं या "डी.एच." छपा है।"**

इस बीच अंग्रेजी संस्करण के प्रकाशन के फलस्वरूप बहुत से उद्धरणों को नये सिरे से दोहराना आवश्यक हो गया था। इस संस्करण के लिए मार्क्स की सबसे छोटी पुत्री एलियानोर ने तमाम उद्धरणो को उनके मूल पाठ से मिलाने की जिम्मेदारी ली थी, ताकि अंग्रेजी प्रकाशनों से लिये गये उद्धरण, जिनकी संख्या सबसे अधिक है, अंग्रेजी संस्करण में जर्मन भाषा से पुनः अनुवाद करके न दिये जायें, बल्कि अपने मूल अंग्रेजी रूप में दिये जायें। इसलिए चौथा संस्करण तैयार करते समय मेरे लिए अंग्रेजी संस्करण को देखना जरूरी हो गया। मिलान करने पर अनेक छोटी छोटी अशुद्धियों का पता चला। कई जगहों पर गलत पृष्ठों का हवाला दिया गया था, जिसका कारण कुछ तो यह है कि नोटबुकों से नकल करते समय गलतियां हो गयी थीं, और कुछ यह कि तीन संस्करणों की छापे की गलतियां भी एक साथ जमा हो गयी थीं, उद्धरण चिन्ह या छोड़े हुए अंश को इंगित करने वाले चिन्ह गलत स्थानों पर लगे हुए थे- जब नोटबुकों में उतारे हुए अवतरणों में से बहुत से उद्धरणों की नकल की जाती है, तब इस तरह की गलतियों से नहीं बचा जा सकता; जहां तहां किसी शब्द का कुछ भद्दा अनुवाद भी हो गया था। कुछ अंश 1843-1845 की पुरानी, पेरिस वाली नोटबुकों से उद्धृत किये गये थे। उस जमाने में मार्क्स अंग्रेजी नहीं जानते थे और अंग्रेज अर्थशास्त्रियों की रचनाओं के फ्रांसीसी अनुवाद पढ़ा करते थे। इसका नतीजा यह हुआ कि दोहरा अनुवाद होने के फलस्वरूप उद्धरणों के अर्थ कुछ बदल गये, उदाहरण के लिए, स्टुअर्ट, यूर, आदि के उद्धरणों के मामले में, जहां अब अंग्रेजी पाठ इस्तेमाल करना जरूरी था। इस प्रकार की छोटी छोटी अशुद्धियें या लापरवाही के और भी उदाहरण थे।

लेकिन जो कोई भी चौथे संस्करण को पहले के संस्करणों से मिलाकर देखेगा, वह पायेगा कि बड़ी मेहनत से की गयी इन तमाम तब्दीलियों से किताब में कोई छोटा सा भी उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं आया है। केवल एक उद्धरण ऐसा था, जिसके मूल का पता नहीं लगाया जा सका। वह रिचर्ड जोन्स का उद्धरण (चौथे संस्करण के पृष्ठ. 562 पर पाद टिप्पणी 47) था। मार्क्स शायद पुस्तक का नाम लिखने में भूल गये हों।*** बाकी तमाम उद्धरणों की प्रभावशीलता ज्यों की त्यों है, या उनका वर्तमान रूप पहले से अधिक सही होने के कारण उनकी प्रभावशीलता और बढ़ गयी है।

लेकिन यहां मेरे लिए एक पुरानी कहानी दोहराना आवश्यक है।

मुझे केवल एक उदाहरण मालूम है, जब मार्क्स के दिये हुए किसी उद्धरण की विशुद्धता पर संदेह प्रकट किया गया था। लकिन यह सवाल चूंकि उनके जीवनकाल के बाद भी उठता रहा हे, इसलिए मैं यहां उसकी अवहेलना नहीं कर सकता।

7 मार्च 1882 को जर्मन कारखानेदारों के संघ के मुखपत्र, बर्लिन के Concordia में एक गुमनाम लेख छपा, जिसका शीर्षक था 'कार्ल मार्क्स कैसे उद्धरण देते हैं' इस लेख में नैतिक क्रोध से उबलते और असंसदीय भाषा का प्रयोग करते हुए कहा गया था कि 16 अप्रैल 1863 के ग्लैडस्टन के बजट भाषण से जो उद्धरण दिया गया है (यह उद्धरण पहले 1864 के अंतर्राष्ट्रीय मजदूर संघ के उद्घाटन वक्तव्य में इस्तेमाल किया गया था और फिर 'पूंजी' के प्रथम खंड के तीसरे संस्करण के पृ. 671 तथा चौथे संस्करण के पृ. 617 पर [वर्तमान संस्करण के पृ. 729 पर] दोहराया गया था), उसमें जालसाजी की गयी है और Hansard में प्रकाशित (अर्ध-सरकारी) शर्टहैंड रिपोर्ट में निम्न वाक्य का एक शब्द भी नहीं मिलताः ''धन और शक्ति की यह मदोन्मत्त कर देने वाली वृद्धि .... पूर्णतया सम्पत्तिवान वर्गों तक ही सीमित... है।'' लेख के शब्द थेः ''लेकिन यह वाक्य ग्लैडस्टन के भाषण में कहीं भी नहीं मिलता। उसमें इससे ठीक उल्टी बात कही गयी है।'' इससे आगे मोटे अक्षरों में छपा थाः ''**यह वाकय अपने रूप तथा सार, दोनों दृष्टियों से एक ऐसा झूठ है, जिसे मार्क्स ने गढ़कर जोड़ दिया है**।'' Concordia का यह अंक अगली मई में मार्क्स के पास भेजा गया, और उन्होंने इस गुमनाम लेखक को पहली जून के Volksstaat में जवाब दिया। चूंकि उन्हें यह याद नहीं था कि उन्होंने उद्धरण के लिए किस अखबार की रिपोर्ट को इस्तेमाल किया था, इसलिए उन्होंने एक तो दो अंग्रेजी प्रकाशनों से उसके जैसे उद्धरण देने और दूसरे The Times अखबार के रिपोर्ट का हवाला देने तक ही अपने को सीमित रखा। The Times की रिपोर्ट के अनुसार ग्लैडस्टन ने यह कहा था:

''जहां तक इस देश की संपदा का संबंध है, तो स्थिति ऐसी ही है। मैं तो अवश्य ही यह कहूंगा कि यदि मुझे यह विश्वास होता कि धन और शक्ति की यह मदोन्मत्त कर देने वाली वृद्धि केवल उन वर्गों तक ही सीमित है, जिनकी हालत अच्छी है, तो मैं इसे लगभग भय और पीड़ा के साथ देखता। इसमें मेहनत करने वाली आबादी की हालत की ओर केाई ध्यान नहीं दिया गया हैः जिस वृद्धि का मैंने वर्णन किया है और जो, मेरे विचार से, सही हिसाब किताब पर आधारित है, वह एक ऐसी वृद्धि है, जो पूर्णतया संपत्तिवान वर्गों क ही सीमित है।''

इस प्रकार, यहां ग्लैडस्टन ने यह कहा है कि यदि स्थिति ऐसी होती, तो उनको अफसोस होता, लेकिन स्थिति ऐसी ही हैः धन और शक्ति की यह मदोन्मत्त कर देनेवाली वृद्धि पूर्णतया संपत्तिवान वर्गों तक ही सीमित है। और जहां अर्ध सरकारी Hansard का संबंध है, मार्क्स ने आगे लिखाः ''अपने भाषण पर थोड़ी हाथ की सफाई दिखाकर मि. ग्लैडस्टन ने बाद में उसका जो संस्करण तैयार किया, उसमें से उन्होंने इस अंश को गायब कर देने की चतुराई दिखायी, क्योंकि इंगलैंड के वित्तमंत्री के मुंह से यदि ऐसे शब्द निकलते, तो यह निश्चय ही भेद खोलने की बात होती। और इसी सिलसिले में हम यह भी बता दें कि इंगलैंड की संसद में इस तरह की चीज परंपरा से होती चली आयी है और यह कोई ऐसी तरकीब नहीं है, जिसे महज नन्हे लास्केर ने ही बेबेल को नीचा दिखाने के लिए ईजाद किया हो।''

गुमनाम लेखक का गुस्सा बढ़ता ही गया। 4 जुलाई के ब्वदबवतकपं में अपने जवाब में उसने तमाम अन्य स्रोतों से प्राप्त होने वाले प्रमाणों को हटाकर अलग कर दिया और बड़े गंभीर ढंग से कहा कि संसद के भाषणों को शार्टहैंड रिपोर्टों से ही उद्धत करने का रिवाज है। लेकिन साथ ही उसने यह भी जोड़ा The Times की रिपोर्ट (जिसमें वह ''झूठा, गढ़ा हुआ'' वाक्य शामिल है) और Hansard की रिपोर्ट (जिसमें वह वाक्य छोड़ दिया गया है) दोनों ''सारतत्व की दृष्टि से एक दूसरे से बिल्कुल मेल खती है'' और The Times की रिपोर्ट में भी ''उद्घाटन वक्तव्य के उस बदनाम अंश की ठीक उलटी बात कही गयी है।'' यह शख्स इस बात को बड़ी एहतिहयात के साथ छिपा जाता है कि The Times की रिपोर्ट में उल्टी बात के साथ साथ वह 'बदनाम अंश'' भी साफतौर पर शामिल है। किंतु इस सब के बावजूद गुमनाम व्यक्ति ने महसूस किया कि वह बुरी तरह फंस गया है और अब कोई नयी तरकीब ही उसे बचा सकती है। चुनांचे, उसका लेख, जैसा कि हम ऊपर दिका चुके हैं ''धृष्टतापूर्ण झूठी बातों'' से भरा पड़ा है और जहां उसमें जगह जगह पर ऐसी ज्ञानवर्द्धक गालियां पढ़ने को मिलती हैं, जैसे ''कुटील भावना'', ''बेईमानी'', ''झूठी तोहमत''ख् ''वह नगली उद्धरण'', ''धृष्टतापूर्ण झूठी तोहमत'', ''सर्वथा झूठा, गढ़ा हुआ उद्धरण'', ''यह झूठ'', ''सरासर अनुचित'', इत्यादि, वहां वह यह भी आवश्यक समझता है कि सवाल को एक दूसरी दिशा में मोड़ दे, और इसलिए वह यह वायदा करता है कि वह एक दूसरे लेख में बतायेगा कि ''ग्लैडस्टन के शब्दों के सारतत्व का हम (यानी धृष्टताविहीन गुमनाम लेखक) क्या मतलब लगाते हैं'' जैसे कि उसका खास मत, जिसका कि, जाहिर है, कोई निर्णायक महत्व नहीं हो सकता, इस मामले से कोई सरोकार रखता है! यह दूसरा लेख 11 जुलाई केा Concordia में प्रकाशित हुआ।

मार्क्स ने एक बार फिर 7 अगस्त के Volksstaat में जवाब दिया। इस बार उन्होंने 17 अप्रैल 1863 के Morning Star और Morning Advertiser नामक पत्रों की रिपोर्टों के उद्धरण दिये, जिनमें यह अंश मौजूद था। इन दोनों रिपोर्टों के अनुसार ग्लैडस्टन ने कहा था कि धन और शक्ति की इस वृद्धि केवल उन वर्गों तक ही सीमित है, ''जिनकी हालत अच्छी है''। लेकिन उनके कथनानुसार यह वृद्धि सचमुच पूर्णतया संपत्तिवान वर्गों तक ही सीमित'' थी। इस प्रकार उन रिपोर्टों में भी उस वाक्य का एक एक शब्द मौजूद था, जिसके बारे में आरोप लगाया गया था कि मार्क्स ने उसे गढ़कर जोड़ दिया है। इसके बाद मार्क्स ने The Times और Hansard के पाठों का मिलान करके एक बार फिर यह साबित किया कि यह वाक्य, जिसके बारे में भाषण की अगली सुबह को एक दूसरे से स्वतंत्र रूप से प्रकाशित होने वाले तीन अखबारों ने बिल्कुल एक सी रिर्पो

छापकर यह प्रमाणित कर दिया था कि वह सचमुच कहा गया था, Hansard की उस रिपोर्ट से गायब है, जिसे जाने पहचाने ''रिवाज'' के अनुसार बदल दिया गया था, और इसलिए यह बात स्पष्ट है कि उसे ग्लैडस्टन ने, मार्क्स के शब्दों में, ''हाथ की सफाई दिखाकर गायब कर दिया था''। अंत में मार्क्स ने कहा कि गुमनाम लेखक से अब और बहस करने के लिए उनके पास समय नहीं है। उस लेखक का भी, लगता है, जी भर चुका था। बहरहाल Concordia का कोई अंक मार्क्स के पास नहीं पहुंचा।

इसके साथ लगा कि मामला खत्म और दफन हो गया है। यह सच है कि बाद को भी एक दो बार कैंब्रिज विश्वविद्यालय के संपर्क रखने वाले कुछ व्यक्तियों से कुछ इस तरह की रहस्यमयी अफवाहें हमारे पास पहुंचीं कि मार्क्स ने 'पूंजी' में कोई अकथनीय साहित्यिक अपराध किया है, लेकिन तमाम छानबीन के बाद भी इससे ज्यादा निश्चित कोई बात मालूम न हो सकी। तब, मार्क्स की मृत्यु के आठ महीने बाद, 29 नवंबर 1883 को The Times में एक पत्र छपा, जिसके सिरनामे पर ट्रिनिटी कालेज, कैंब्रिज, लिखा था और जिसके नीचे सेडली टैलर के हस्ताक्षर थे। इस पत्र में इस आदमी ने, जो बहुत ही साधारण ढंग के सरकारी मामलों पर कलम घिसा करता है, मौका पाकर हमें आखिर न सिर्फ कैंब्रिज की उस अस्पष्ट अफवाहों की असलियत से परिचित करवा डाला, बल्कि Cancordia के उस लेख की जानकारी भी दे दी।

ट्रिनिटी कालेज के इस आदमी ने लिखाः ''जो बात बहुत ही अजीब मालूम होती है, वह यह है कि मि. ग्लैडस्टन के भाषण को (उद्घाटन-) वक्तव्य में उद्धृत करने के पीछे स्पष्ट ही जो दुर्भावना छिपी थी, उसका भंडाफोड़ करने की.... जिम्मेदारी प्रोफेसर ब्रेन्तानो (जो कि उस तक्त ब्रेस्लौ विश्वविद्यालय में थे और आजकल स्ट्रसबुग्र विश्वविद्यालय में हैं) के कंधों पर जाकर पड़ी। हर कार्ल मार्क्स ने ... उद्धरण को सही सिद्ध करने की कोशिश की। पर ब्रेन्तानो ने इस उस्तादी के साथ उनपर धावा बोला कि उन्हें बार बार पैंतरा बदलना पड़ा और उनकी जान पर बन आयी। इस परिस्थिति में हर कार्ल मार्क्स ने यह कहने की धृष्टता की मि. ग्लैडस्टन ने 17 अप्रैल 1863 के The Times में प्रकाशित अपने भाषण की रिपोर्ट पर उसके hansard में प्रकाशित होने के पहले हाथ की सफाई का प्रयोग किया था और एक ऐसे अंश को उससे गायब कर दिया था, जो इंगलैंड के वित्तमंत्री के लिए सचमुच भेद खोलने की बात होती। ब्रेन्तानों ने The Times तथा hansard में प्रकाशित रिपोर्टों के पाठ का सूक्ष्मता से मिलान करके यह साबित किया कि इन रिपोर्टों में यह समानता है कि चालाकी के साथ संदर्भ से अलग किया हुआ उपर्युत उद्धरण मि. ग्लैडस्टन के शब्दों को जो अर्थ प्रदान करता था, उसकी इन दोनों ही रिपोर्टों में कोई गुंजायश नहीं है। तब मार्क्स ने 'समय के अभाव' का बहाना बना करके बहस जारी रखने से इनकार कर दिया।''

सो इस पूरे मामले की तह में यह बात थी! और Consordia के जरिए चलाया गया हर ब्रेन्तानों का यह गुमनाम आंदोलन कैंब्रिज की उत्पादक सहकारी कल्पना में इस शानदार रूप में प्रतिबिंबित हुआ था। जर्मन कारखानेदारों के संघ के इस संत जार्ज ने इस प्रकार तलवार हाथ में लेकर पाताल लोक के उस अजगर मार्क्स का सामना किया था, उससे लोहा लिया था और उस्तादी के साथ उस पर धावा बोला था कि उसे बार बार पैंतरा बदलना पड़ा और उसकी जान पर बन आयी और उसने बहुत जल्द हर ब्रेन्तानों के चरणों में गिरकर दम तोड़ दिया।

लेकिन कवि अरिओस्तो द्वारा प्रस्तुत किये गये रणभूमि के दृश्य से मिलता जुलता यह चित्र केवल हमारे संत जार्ज की पैंतरेबाजी पर पर्दा डालने का ही काम करता है। यहां 'झूठमूठ गढ़कर जोड़ दिये गये वाक्य'' की या ''जालसाजी'' की कोई चर्चा नहीं है, बल्कि अब तो ''चालाकी के साथ संदर्भ से अलग किये हुए उद्धरण'' का जिक्र हो रहा है। सवाल का पूरा स्वरूप ही बदल दिया गया है, और संत जार्ज तथा उनके कैंब्रिज वासी अनुचर को अच्छी तरह मालूम था कि ऐसा क्यों किया गया है।

एलियानोर मार्क्स ने इसका मासिक पत्रिका To-day (फरवरी 1884) में जवाब दिया, क्योंकि The Times ने उनका पत्र छापने से इनकार कर दिया था। उन्होंने एक बार फिर बहस को इस एक सवाल पर केंद्रित कर दिया कि क्या मार्क्स ने उस वाक्य को ''झूठमूठ गढ़कर जोड़ दिया था''? इस सवाल का मि. हेडली टैलर ने यह जवाब दिया कि उनकी राय में ''प्रश्न कि मि. ग्लैडस्टन के भाषण में यह वाक्य सचमुच इस्तेमाल हुआ था या नहीं,'' ब्रेन्तानों मार्क्स विवाद में ''इस सवाल की अपेक्षा बहुत ही गौण महत्व रखता है कि विवादग्रस्त अंश पाठकों को मि. ग्लैडस्टन के शब्दों का सही अर्थ बताने के उद्देश्य से उद्धृत किया गया था अथवा उसे विकृत ढंग से पेश करने के उद्देश्य से।'' इसके बाद मि. सेडली टेलन ने यह स्वीकार किया कि The Times की रिपोर्ट में ''एक शाब्कि असंगति'' है; लेकिन यदि संदर्भ की सही तौर पर व्याख्या की जाये, अर्थात यदि उसकी ग्लैडस्टनवादी उदारपंथी अर्थ में व्याख्या की जाये, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि मि. ग्लैडस्टन क्या कहना चाहते थे (To-day, मार्च 1884)। यहां सबसे ज्यादा मजाक की बात यह है कि हमारे कैंब्रिजवासी का इसरार अब यह नहीं है कि भाषण hansard से उद्धृत किया जाये, जैसा कि गुमनाम ब्रेन्तानों के कथनानुसार 'रिवाज' है, बल्कि अब वह उसे The Times की रिपोर्ट से उद्धृत करना चाहता है, जिसे उन्हीं ब्रेन्तानों महाशय ने ''आवश्यक रूप से गड़बड़ कर देनेवाली'' रिपोर्ट कहा था। उसका यह इसरार करना स्वाभाविक है, क्योंकि hansard की रिपोर्ट में मुसीबत की जड़ वह वाक्य गायब है।

एलियानोर मार्क्स को इन सारी दलीलों को फूंक मारकर हवा में उड़ा देने में कोई कठिनाई नहीं हुई (उनका जवाब To-day के उसी अंक में प्रकाशित हुआ था।) उन्होंने कहा था कि या तो मि. टेलर ने 1882 की बहस को पढ़ा था और उस सूरत में वह अब न सिर्फ ''झूठमूठ गढ़कर'' बातें जोड़ रहे हैं, बल्कि कुछ बातों को दबाकर ''झूठ'' भी बोल रहे हैं, या फिर उन्होंने उस बहस को पढ़ा नहीं था और इसलिए उन्हें खामोश रहना चाहिए। दोनों सूरतों में यह निश्चित है कि अब वह एक क्षण के लिए भी यह दावा करने की हिम्मत नहीं कर सकते कि उनके मित्र ब्रेन्तानों का यह आरोप सही था कि मार्क्स ने कोई बात ''झूठमूठ गढ़कर'' जोड़ दी थी,। इसके विपरीत, अब ता यह प्रतीत होता है कि मार्क्स ने झूठमूठ गढ़कर कोई बात जोड़ी नहीं थी, बल्कि एक महतवपूर्ण वाक्य दबा दिया था। लेकिन यही वाक्य उद्घाटन वक्तव्य के पृष्ठ 5 पर तथाकथित ''झूठमूठ गढ़कर जोड़े गये वाक्य'' से कुछ पंक्तियां पहले उद्धत किया गया है। और जहां तक ग्लैडस्टन के भाषण में पायी जाने वली ''असंगति'' का प्रश्न है, क्या खुद मार्क्स ने 'पूंजी' के पृ. 618 (तीसरे संस्करण के पृ. 672) के नोट 105 [वर्तमान संस्करण के पृ. 685 की पाद टिप्पणी 105] में ''ग्लैडस्टन के 1863 और 1864 के बजट भाषणों की लगातार सामने आने वाली भयानक असंगतियों'' का जिक्र नहीं किया है? हां, उन्होंने बतर्ज

मि. सेडली टेलर उनको आत्मसंतुष्ट उदारपंथी भावनाओं में बदल देने की जरूर कोई कोशिश नहीं की। अपने स्तर के अंत में एलियानोर मार्क्स ने पूरी बहस का निचोड़ निकालते हुए यह कहा था:

''मार्क्स ने उद्धृत करने योग्य कोई बात नहीं दबायी है और न ही उन्होंने 'झूठमूठ गढ़कर' कोई बात जोड़ी है। लेकिन उन्होंने मि. ग्लैडस्टन के भाषण के एक खास वाक्य को पुनर्जीवित जरूर किया है और उसे विस्मृति के गर्त से बाहर निकाला है, और यह वाक्य असंदिग्ध रूप से मि. ग्लैडस्टन द्वारा कहा गया था, लेकिन किसी ढंग से hansard से गायब हो गया।''

इस तरह मि. सेडली टेलर की भी काफी ख्बर ली जा चुकी थी; और बीस वर्ष से दो बड़े देशों में जो प्रोफेसराना ताना बाना बुना जा रहा था, उसका आखिरी नतीजा यह हुआ कि उसके बाद से कभी किसी ने मार्क्स की साहित्यिक ईमानदारी पर कोई और आरोप लगाने की हिम्मत नहीं की; और जहां तक मि. सेडली टैलर का संबंध है, वह अब निस्संदेह हर ब्रेन्तानों का साहित्यिक युद्धविज्ञप्तियों पर उतना ही कम भरोसा किया करेगे, जितना हर ब्रेन्तानो hansard की पोप मार्का सर्वज्ञता पर।

फ्रेडरिक एंगेल्स

लंदन, 25 जून 1890

---

* 1887 के अंग्रेजी संस्करण में यह अंश खुद एंगेल्स ने जोड़ दिया था।-सं.

** वर्तमान संस्करण में वे बड़े कोष्ठकों में बंद किये गये हैं और उनके साथ ''फ्रे.एं.'' छपा है। -सं.

*** मार्क्स ने पुस्तक का नाम लिखने में गलती नहीं की थी, बल्कि पृष्ठ संख्या लिखने में उनसे भूल हुई थी। 37 के बजाय उन्होंने 36 लिख दिया था। (देखिए 631)।-सं.